हमारी गायें

लेखक

श्रीराम शर्मा

प्रकाशक

अयोध्या सिंह

विशाल-भारत बुकडिपो,

१९५।१, हरिसन रोड, कलकत्ता।

मिलनेके पते :—

(१) विशाल-भारत बुकडिपो,

१९५।१, हरिसन रोड, कलकत्ता।

(२) शंकर-सदन, लोहामंडी, आगरा।

(३) साहित्य-सदन, किरथरा,

पो० मक्खनपुर (मैनपुरी)

E. I. Ry.

मूल्य एक रुपया पाँच आने

प्रवासी प्रेस

१२०।२, अपर सरकूलर रोड कलकत्ता।

श्री रमेशचन्द्र रायचौधरी द्वारा

मुद्रित

समर्पण

प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तक 'हमारी गायें' लेखकके 'विशाल भारत' मे छपे कतिपय लेखकोंका सग्रहमात्र ही नही है, वरन उसमे कुछ नए अप्रकाशित लेख भी हैं। श्री कुँवर सुरेन्द्रसिंह 'इन्द्र' का 'विशाल भारत' मे प्रकाशित 'दूध दुहनेकी कला' शीर्षक लेख भी इस सग्रहमे है।

हिन्दीमे गो-वशपर कई पुस्तकें है, पर 'हमारी गायें' एक नए दृष्टिकोणसे लिखी गई है। गायकी उपयोगिता और उसके लाभपर विशेष लिखना हम आवश्यक नहीं समझते, क्योंकि गो-वशकी उपयोगिताके बारेमे किसीको कोई आपत्ति नहीं। धार्मिक और भावुक दृष्टिसे भी इस पुस्तकमे कुछ नहीं लिखा गया, वरन् आर्थिक दृष्टिसे और साथ ही इस खयालसे कि हमारे देशवासी अपने देशकी गायोकी नस्लोको पहचान सकें। इसीलिए पुस्तकमे हमने चित्र दिये हैं। हिन्दीमे अब तक कोई ऐसी पुस्तक नही थी, जिससे पढे-लिखे लोगोको भारतीय गायोंकी नस्लका ज्ञान हो सके।

'हमारी गाये' मे भारतकी गायोकी प्रसिद्ध ६ नस्लोपर विस्तारसे लिखा गया है और अन्य १६ नस्लोका अति सूक्ष्म परिचय दिया गया है। इन पक्तियोंके लेखकका विश्वास है कि यदि पाठक पुस्तकको ध्यानसे पढेगे और प्रत्येक नस्लकी विशेषताओका स्मरण करते हुए मार्गमे मिलनेवाली गायोंका सरसरी तौरसे अध्ययन करेंगे, तो न केवल गो-सम्बन्धी उनके ज्ञानमे वृद्धि होगा, वरन् उस अध्ययनसे उनकी रोचकता और मानसिक उत्सुकता भी बढेगी। इस पुस्तकमें वर्णित भारतीय गायोकी नस्ल-सम्बन्धी सामग्री 'कृषि-शोधकी शाही कौंसिल' (The Imperial Council of Agricultural Research) की बुलैटीन न० २७ और ४६ के आधारपर लिखी गई है।

यदि पाठकोंने इस पुस्तकको पसन्द किया, तो इन पक्तियोके लेखकका विचार है कि भारतीय गायोकी प्रमुख नस्लोके असली इलाकोंमे जाकर वहांके जलवायु, जमीन, खेती-बारी और गायोके दाने-चारेकी छानबीन करके एक पुस्तक लिखी जाय, जिसमें सैकड़ों चित्र हो। उस पुस्तकमे प्रत्येक सूबेका ऐसा

नक्शा भी हो, जिससे पाठक यह जान सकें कि अमुक सूबेके अमुक भागमें अमुक नस्लकी उन्नति सम्भव है तथा अमुक नस्लकी गाय पालनी श्रेयस्कर है।

इन पक्तियोके लेखकका विश्वास है कि सरकार और जनताके सहयोगसे हम भारतीय गायोंकी मुख्य और आवश्यक नस्लोंका वर्गीकरण और नई नस्लोंका चुनाव आसानीसे कर सकते हैं। ऐसा होनेसे देशका बडा कल्याण होगा। असलमें अच्छा तो यह है कि विचारशील और देहाती समस्यामें रुचि रखनेवाले लेखक, जो देहातियोंमें घुल-मिल सकें, एक-एक नस्लको ले ले और सालमे दो-तीन महीने इस कार्यके लिए देकर दो-तीन वर्षमें एक-एक सुन्दर पुस्तक लिख सकें, तो देशका और हिन्दी-साहित्यका बडा हित हो। हरियानेकी नस्लपर २५० पृष्ठकी एक पुस्तक लिखनेका निर्णय तो हमने कर लिया है।

कृतज्ञा-प्रकाशन

इस पुस्तकमें ५५ पृष्ठसे लगाकर १२३ पृष्ठ तक जितने चित्र हैं, वे सब इम्पीरियल कौंसिल आफ एग्रीकलचरल रिसर्चकी कृपासे प्राप्त हुए हैं। इन चित्रोके उपयोग करनेकी जो अनुमति भारत सरकारसे रिसर्च कौंसिलने हमें दिलाई है, उसके लिए हम एग्रीकलचरल कौंसिल आफ रिसचके वायस-चेयरमेन श्री पीरोज महरबान खरेगाट (Mr P M Kharegat, C I E I C S) और सेक्रेटरी श्री भगवान सहाय, आई० सी० एस० के बडे आभारी हैं। यदि इन चित्रों और इम्परियल कौंसिल आफ एग्रीकलचरल रिसर्चकी बुलैटिनोंके प्रयोग करनेका हमे अवसर न मिलता, तो यह किताब अधूरी और अरोचक रहती। इसलिए हम एक बार फिर उन सबको धन्यवाद देते हैं।

इस पुस्तककी तैयारीमे हम अपने सहायक श्री मोहनसिह सेगर और विशेषकर श्री श्रीपति पाण्डेयके आभारी हैं, जिन्होने प्रूफ देखने और देखभालका काम हमारे लिए किया।

श्रीराम शर्मा

विषय-सूची

चित्र-सूची

हमारी गायें

गाय बनाम भैंस

सन् १९३४-३५ में भारतवर्षमें विदेशसे मक्खन ६ लाख २३ हजार रुपएका, पनीर ८ लाख ४६ हजार रुपएका, दुग्धजात खाद्य १३ लाख ६७ हजार रुपएका, घी १८ हजार रुपएका और जमा दूध ४८ लाख ३५ हजार रुपएका आया। हालैण्ड-जैसे छोटे देशने एक वर्षमें अकेले इंग्लैण्डको एक करोड़ रुपएका मक्खन, १॥ करोड़ रुपएका पनीर और ३॥ करोड़ रुपएका दूध बेचा।

कलकत्ता, बम्बई, कानपुर तथा अन्य नगरोंके हिन्दू अमीर गो-भक्त बनते हैं, गोपाष्टमी भी मनाते हैं और आवश्यकता पड़नेपर गायकी कुर्बानी-सम्बन्धी मुकदमोंमें हजारों रुपए खर्च करनेका साहस भी रखते हैं; पर गो-पालनकी ओर इन धनी लोगोंका ध्यान नहीं। मोटरोंकी भों-भों और पों-पोंसे गरीब पदचारियोंके कान फोड़ेंगे, पेट्रोलके धुएँसे दुर्गन्ध फैलायेंगे, अधिकांश समय 'वैभव' की माला जपेंगे और इस बातका खयाल नहीं करेंगे कि एक बड़े नगरके दूधके अभावकी पूर्ति करनेसे स्वार्थ और परमार्थ दोनोंकी सिद्धि होती है।

यह हम मानते हैं कि व्यापार भावुकतासे नहीं चलता। इसीलिए हम कहते हैं कि गो-पालनकी समस्यापर भावुकतासे नहीं, वरन आर्थिक और व्यापारिक दृष्टिसे विचार करना चाहिए। हमारा विचार है कि यदि गो-पालनको कुछ लोग व्यापारिक दृष्टिसे करे, तो उन्हे फाटकेसे कम लाभ न होगा।

निम्नांकित तालिकासे पाठकोंको मालूम होगा कि ससारके नीचे लिखे बीस देशोमे प्रतिव्यक्ति औसतन कितने औंस दूध प्रतिदिन अपने काममें लाता है —

नाम देश	प्रतिव्यक्तिपर दैनिक दूधका खर्च (औंस)	नाम देश	प्रतिव्यक्तिपर दैनिक दूधका खर्च (औंस)
फिनलैण्ड	६३	सयुक्त-राष्ट्र अमेरिका	३५
स्वीडन	६१	हालैण्ड	३५
न्यूजीलैण्ड	५६	जर्मनी	३५
स्वीजरलैण्ड	४९	कनाडा	३५
आस्ट्रेलिया	४५	फ्रास	३०
नारवे	४३	आस्ट्रिया	३०
डेन्मार्क	४०	पोलैण्ड	२२
ग्रेट ब्रिटेन	३९	इटली	१०
चेकोस्लोवाकिया	३६	रूमानिया	९
बेल्जियम	३५	भारतवर्ष	७

इन आँकडोंसे अनुमान लगाया जा सकता है कि तुलनात्मक दृष्टिसे भारतीयोंको पीनेके लिए नाममात्रका दूध मिलता है। जिस देशके बच्चोंको दूध

न मिले, उस देशके बच्चोंकी बढ़वार मारी जाती है। इसके अतिरिक्त यहाँ जिस किसीको दूध पीनेको मिलता है, वह गायका भी नहीं होता। बच्चों और विद्यार्थियोंको गायके दूधके बजाय भैंसका दूध देना उनके साथ अत्याचार करना है। जो बच्चे और विद्यार्थी दूध पी सकते हैं, उन्हे गायका ही दूध पीना चाहिए, क्योंकि छोटे बच्चोंको भैंसका दूध न केवल कभी-कभी शूलकी पीड़ा ही पैदा करता है, वरन वह उन्हे सुस्त भी बना देता है। घोड़े पालनेवाले बछेड़ोंको भैंसका दूध कभी नहीं पिलाते, क्योंकि भैंसके दूधसे वे बड़े होकर भैंसेकी भांति पानीमे लोटने लगते हैं। गायकी तेजी और समझदारी प्रसिद्ध है और उन्हीका असर उसके दूधमें भी है।

अब प्रश्न यह है कि लोग गायकी अपेक्षा भैंसको क्यों अधिक रखते हैं? पहले तो गाय और भैंसके स्वभावमे ही भेद है। अपेक्षाकृत भैंस बँधी रहकर भी गायके मुकाबलेमे स्वस्थ रह सकती है। दूसरे, देशोंमे चरागाहोंकी कमी हो जानेसे गायोंको घूमने-फिरनेके लिए जगह नहीं मिलती। तीसरे, गायकी अपेक्षा भैंसके दूधमे घी अधिक निकलता है। घीके व्यापारी इसलिए भैंसके लिए रुपए कर्ज देते हैं और घी लेकर रुपएका भुगतान करते हैं। कारतकारको बदलेमे मट्ठा और तीज-त्योहारके लिए घी मिल जाता है। चौथे, हमारे यहाँ घीका व्यापार तो होता है, पर दूधका व्यापार इस प्रकार नहीं होता कि चार-पाँच सौ मीलसे दूध बाहर भेजा जाता हो। घी हजारों मील दूरसे मँगाया जा सकता है।

यह ठीक है कि डेरीके कामके लिए—घी और मक्खनके व्यापारके लिए—भैंसोंका रखना जरूरी है; पर यह भी निश्चित बात है कि खेतीके भैंसके पुल्लिंगोंकी अपेक्षा गायके सपूत ही अधिक उपयोगी हैं। साथ

हमारा दावा यह भी है कि काश्तकारके लिए भैंसकी अपेक्षा गायका पालना अधिक लाभदायक है। यह बात तो स्पष्ट ही है कि भैंसके मुकाबले गाय अधिक दूध देती है। गाय और भैंसकी तुलना करते समय लोग एक बड़ी भूल यह करते हे कि वे अच्छी भैंसका मुकाबला रद्दी अथवा घटिया गायसे करते हैं। बढिया गाय और बढिया भैंसका मुकाबला किया जाय, तो पता चलेगा कि काश्तकारको गाय रखनेमें अधिक लाभ है। उदाहरणके लिए १५०) की गाय और १५०) की भैंसको लीजिए। दोनोंके दो ब्यांतोंका हिसाब लगाइये। मान लीजिए, १५०) की भैंस कोई काश्तकार लेता है। वह रोजाना अठारह सेर दूध देती है। एक काश्तकार १५०) की हरियानेकी गाय लेता है। १५०) की गाय चौदह सेर दूध जरूर देगी।

गायकी अपेक्षा भैंसके दाने-चारेमे खर्च अधिक पड़ेगा। यह भी मान लीजिए कि गाय और भैंस प्रति ब्यांत (Lactation) ८ महीने दूध देती है। घीकी कीमत आप बाजार-भावसे लगा लीजिए। गायका मालिक गायके बछडेको दूध खूब पिलाता है और बाकी दूधसे अपने घरका खर्च चलाता है अथवा घी तैयार करता है। पर एक सालके बाद १५०) की गायका बछड़ा ७०) या ८०) से कममे नहीं बिकेगा और दो वर्षमे वह १५०) का बैल बनेगा। लेकिन भैंसका पडरा दो वर्षमे २५) से ज्यादामे नही बिक सकता। यदि गायकी बछिया भी हुई, तो भी दो वर्षमे वह ७०) या ८०) की ओसर हो जायगी और भैंसकी पड़िया दो वर्षमे ज्यादासे ज्यादा ६०) या ७०) रुपएमे बिकेगी। ऐसी दशामे गायकी कीमत तो एक बछडा ही चुका देगा और गायका दूध मुनाफेमे रहेगा। सबसे अच्छी बात यह होगी कि काश्तकारको अपनी खेतीके लिए घरका तैयार किया हुआ बैल

गायकी पहचान

भारतवर्षकी मूल समस्या किसानोंकी समस्या है। जो देश-सेवक और साहित्य-सेवी किसानोंकी समस्याको नहीं समझता, वह न तो उस समस्याको हल करनेमें ही सफल हो सकता है और न उससे देशकी कोई ठोस सेवा ही हो सकती है। चुनाव लड़ना और पदोंकी लोलुपता तो रोगके बाह्योपचार ही हो सकते हैं, उसके इलाज नहीं। आयरलैण्डके राष्ट्रीय कार्यकर्ता जो कुछ सफलता प्राप्त कर सके, उसका कारण केवल वहांके देश-भक्तोंका बलिदान ही नहीं है, वरन् वह ठोस रचनात्मक कार्य है, जिसके बल-बूतेपर सिनफिन-आन्दोलन और अन्य राष्ट्रीय कार्य चल सके थे। होरेस प्लैंकेट और 'ए० ई०' (स्वर्गीय जान रसेल) ने आयरलैण्डमें सहकारिता-आन्दोलन तथा गायोंकी नस्ल अच्छी करनेके लिए जो कार्य किया, उसका यहां अभी ठीक प्रकारसे श्रीगणेश भी नहीं हुआ है। कहा जाता है कि आयरलैण्डकी प्रत्येक स्त्री (Dairy-woman) ग्वालिन ही कही जाती है। गायोंकी देख-भाल और उनका पालन-पोषण प्राय वहां स्त्रियां ही करती हैं। फलस्वरूप आयरलैण्डके गृहस्थ अपेक्षाकृत बहुत सुखी है। कोई जमाना था, जब कि भारतवर्षमें भी गायोंकी देख-भालपर बहुत ध्यान दिया जाता था। गाय दुहनेका काम लड़कियोंके सुपुर्द था, इसीलिए उन्हे 'दुहिता' कहा जाता था।

गायका सम्बन्ध कृषि और हमारे जीवनसे बहुत अधिक है, इसीलिए गायको 'गोमाता' कहते हैं। पर दुःख इस बातका है कि कृषि-प्रधान

भारतवर्षमें गायोंकी नस्लोंकी उन्नतिकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। गायोकी नस्लोंकी उन्नतिके मसलेपर अगर लोगोंसे सूक्ष्म-दृष्टिसे विचार-विनिमय किया जाय, तो वे कोरमकोर चवाल सौ पाए जायँगे। यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति देशकी प्रत्येक बातको समझे। जो देशकी समस्याओमे दखल रखते हैं और जो चाहते हैं कि देशवासियोंका स्वास्थ्य सँभले और किसानोकी हालत अच्छी हो, उनके लिए यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि भारतवर्षकी गायोकी प्रसिद्ध नस्ले क्या-क्या हैं और प्रत्येककी खूबियाँ क्या-क्या हैं ?

यह हम मानते हैं कि भारत-सरकार इस विषयमे कुछ कार्य कर रही है। पर देशकी आबादीकी दृष्टिसे यह कार्य उर्दकी सफेदीके बराबर है। इस विषयमे जो शोध-कार्य हो रहा है, उसके बारेमे इन पक्तियोंके लेखककी आपत्ति यह है कि उससे अभी उन समझदार व्यक्तियोंको कोई लाभ नहीं, जो अगरेज़ी नही जानते। और वह शोध-कार्य किस कामका, जिससे जनताका कुछ लाभ नही। उदाहरणके लिए आज यदि कोई शिक्षित युवक देहातमे बसना चाहता है, घी-दूधका कारबार करना चाहता है और यह चाहता कि उसे किसी तरह अच्छी और बुरी गायकी पहचान हो सके, तो हिन्दीमें उसे इस विषयकी कोई पुस्तक नहीं मिलेगी। अगरेजीमे भी यों तो अनेक पुस्तकें हैं, पर सूबोंके कृषि-विभाग द्वारा ऐसी पुस्तके नाम-मात्रको ही निकाली गई हैं। इम्पीरियल कौंसिल आफ् एग्रीकल्चरल रिसर्चने इस विषयमे कई पुस्तकें निकाली हैं; पर वे सबकी सब अगरेजीमें ही है।

यह हम मानते है कि किसानोंको इस प्रकारकी पुस्तकोंकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं; पर फिर भी उन सूबोंमे जहाँ नस्लको उन्नत करना

जरूरी है, ऐसी पुस्तकोंकी बहुत जरूरत है। अबसे १५-१६ वर्ष पूर्व हमने संयुक्त-राष्ट्र अमेरिकाके कृषि-विभागसे इस सम्बन्धमे पत्र-व्यवहार किया था। उसने इन पंक्तियोंके लेखकको एक किताब भेजी, जिसका नाम है—"The Cow : The Mother of Prosperity', अर्थात् 'समृद्धिकी माता—गाय'। इस प्रकारकी पुस्तक हमारे यहाँ एक भी नहीं है। पाठकोंके लाभार्थ उसी किताबके आधारपर हम बढ़िया गायकी पहचानके बारेमे यहाँ कुछ लिख रहे हैं।

अच्छे और बुरे सिरकी पहचान

अच्छी गाय

यह देखिए, कितना अच्छा सिर है, आँखे चमकीली है, जो स्वास्थ्य-सूचक हैं। चेहरा मझोला है, जिसमे मुटापा नहीं है। चौडी नाक, बड़े नथुने, बड़ा मुँह, जिससे प्रकट होता है कि बड़ी खद्दड़ (खूब खानेवाली) है।

बुरी गाय

यह देखिए, बुरा सिर है, आँखे फीकी, नाक नुकीली, नथुने छोटे, मुँह छोटा, जबड़ा कमजोर। ये सब बातें साफ प्रकट करती है कि यह गाय अच्छी नहीं हो सकती। ऐसे सिरवाली गायको समझदार आदमी कभी नही खरीदते।

अच्छी गाय
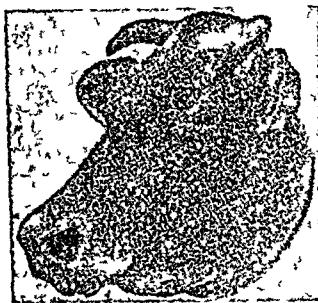
यह दूसरे अच्छे सिरका नमूना है। बड़े-बड़े नथुनोंको देखिए, जिनसे फेफड़ोंमे काफी आक्सीजन जा सकती है। जबड़ा कितना मजबूत है, जो चारेको खूब अच्छी तरह चवा सकता है। दूध चारे और दानेपर ही निर्भर है।
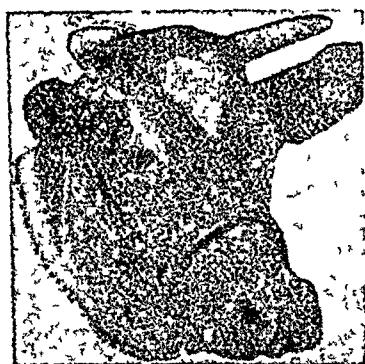
बढिया गायकी चमड़ी मखमलकी तरह मुलायम होनी चाहिए; पर कान भी मखमलकी तरह मुलायम होने चाहिए। अनेक गायोंके कानोंके भीतर पीले रंगके मैलकी परत जमी होती है।

बुरी गाय
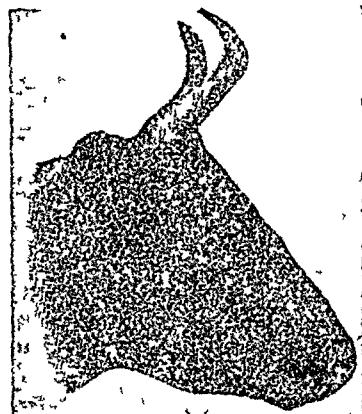
अगर किसी गायके ऐसा बैल-नुमा सिर हो, तो समझ लीजिए कि वह दुधार नही हो सकती। अपवाद-स्वरूप कुछ दुधार गायोंके भोंडे सिर होते हैं; पर गाय खरीदते वक्त उसके अच्छे सिरका जरूर खयाल रखिए।

यदि गाय अपना सिर नीचा करे और उसकी आँखें फीकी तथा कान झुके हुए हों, तो इस वातका पता लगाइए कि उसे यक्ष्मा (तपेदिक) तो नहीं है।

गायके सामने खडे हूजिए—उससे कुछ हटकर—और उसके सामनेके हिस्सेको अच्छी तरह देखिए। इस तरह देखनेसे आपको गायकी अच्छाई-बुराईकी और भी पहचान होगी।

अच्छी गाय
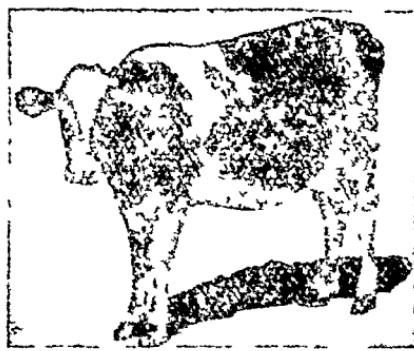
अच्छी गायकी टाँगे ऐसी होनी चाहिएँ, जो उसके नीचे एक वर्ग-सा बनायँ और आरामसे खडे होनेपर टाँगें दूर-दूर रहे। इसके मानी ये हुए कि गायकी छाती बहुत अच्छी है।

गायकी बगलोंकी तरफ देखिए। उसके पेटका घेरा काफी है। उसकी पसलियाँ खूब फैली हुई हैं। इससे साफ मालूम होता है कि वह काफी चारा खा सकती है।

बुरी गाय

ऐसी गाय कभी न खरीदिए, जो अगली टाँगोंको मिलाकर खड़ी होती हो। इस प्रकार खड़ा होना प्रकट करता है कि गायमें शक्ति बहुत कम है, उसकी छाती छोटी है और हृदय कमजोर है।

यह देखिए, कितनी खराब गाय है। बीचसे सुकड़ी, पसलियाँ चपटीं, घेरा भी छोटा। ऐसी गाय कुतिन होगी और कभी ज्यादा दूध नहीं देगी।

एक बगलको हटकर उसकी गर्दनकी तरफ देखिए—

अच्छी गाय
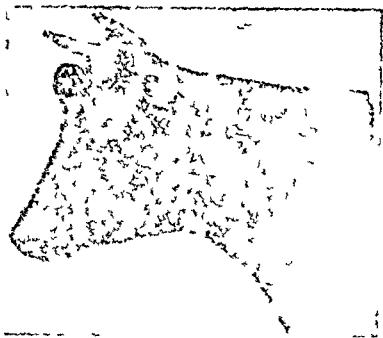
अच्छी गायकी गर्दन प्रायः साफ और मुलायम होती है और ऊपर जरा कुछ ढलवाँ-सी ।

बुरी गाय
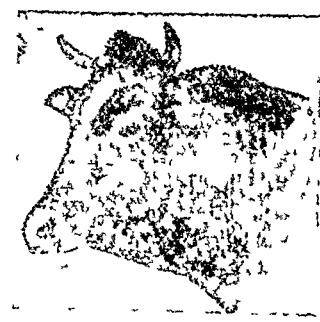
ऐसी गाय कभी न खरीदिए, जिसकी गर्दन बहुत खुरदरी तथा बहुत मोटी हो और गर्दनके नीचे बहुत मांस हो ।

कुछ कदम पीछे हटिए और बगलसे गायको देखिए—
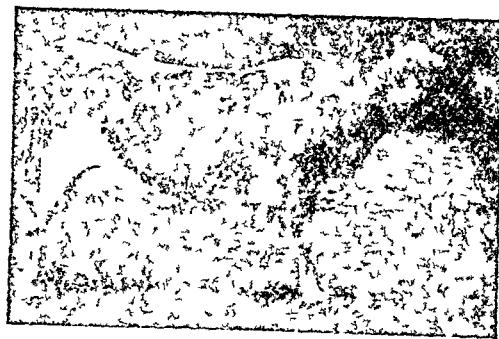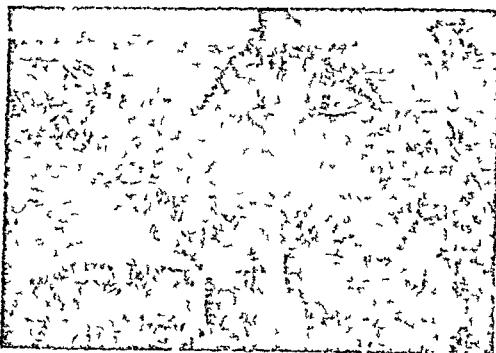
गायकी पीठ कन्धेसे लगाकर पूँछकी जड़ तक सीधी एक ही रेखामें होनी चाहिए, उसकी पीठ काफी लम्बी होनी चाहिए, ताकि उसका बीचका हिस्सा काफी बड़ा हो । यह बात विलायती गायोंके लिए ही लागू है । भारतीय गायोंके ढाट होता है ।

अच्छी दूध देनेवाली गायकी पीठ छोटी हो सकती है; लेकिन वह कमजोरीकी निशानी है । अच्छी विलायती गायकी पीठमें कोई झुकाव नहीं होना चाहिए । हर हालतमें झुकाववाली अगरेजी गाय न खरीदना ही अच्छा है ।

अच्छी गाय

बगलसे देखनेपर पुट्ठेकी रेखा सीधी होनी चाहिए ।
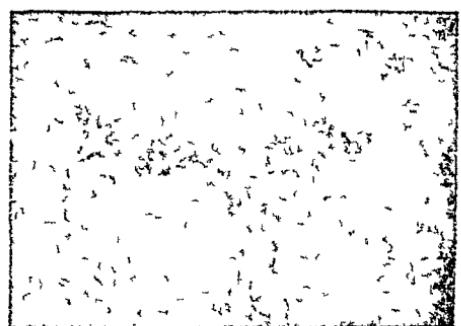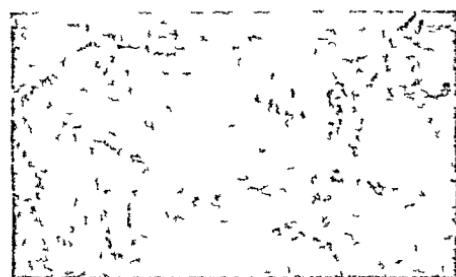
अच्छी गायमें दो जरूरी बातें ये हैं—(१) अच्छी गठन, (२) अधिक चारा खानेकी शक्ति । प्रतिदिन २५ सेर दूध देनेवाली इस गायमें ये दोनों ही बातें हैं ।

बुरी गाय

भोंड़ी और गहरा पुट्ठा खराब ऐनका द्योतक है ।

जिस गायका बीचका हिस्सा बहुत छोटा हो, उसे कभी न खरीदिए । वह दूध भी कम देती है ।

गायको हमेशा करीबसे देखिए—
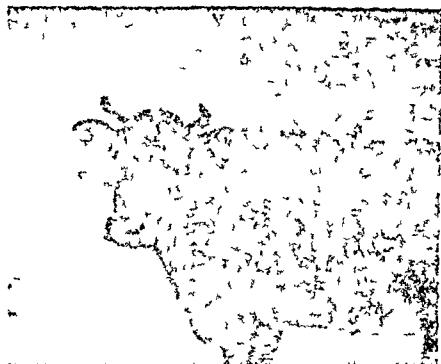
कुछ बुढिया गायोंके—विशेषकर जब वे बहुत अधिक दूध देती हैं—कन्धे ढाटकी ओरको तनिक उठे हुए होते है।

पर अगर उसके कन्धे ऐसे न हो, तब भी गाय कोई बुरी नही होती।
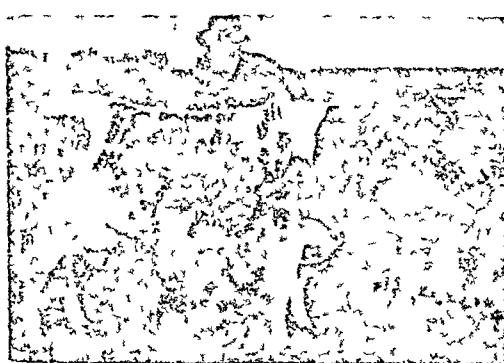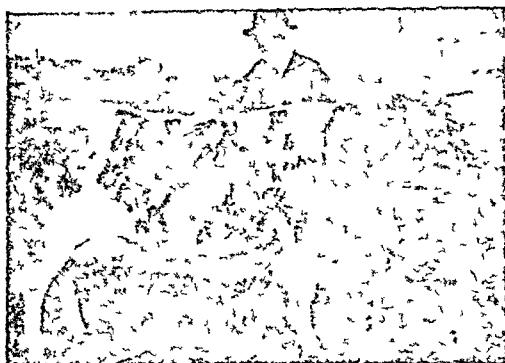
गायकी रीढपर हाथ इधरसे उधर फेरिये। बहुत-सी अच्छी गायोंकी रीढके हिस्से बहुत पास-पास नही होते है। कमर चौडी और समतल होनी चाहिए।

गायकी पीठको अच्छी तरह देखिए और उसकी मुटाईका अन्दाज उसके दिलसे लगाइए। पसलियाँ खूब फैली हुई होनी चाहिएँ, ताकि उसका बिचला भाग बडा हो।

चमडी मुलायम और लचीली चाहिए। कडी और सूखी चमडी इस बातकी द्योतक है कि खूनका दौरा ठीक नही है और गाय अच्छी हालतमे नहीं है।

अच्छी गायकी पसलियां प्राय एक दूसरेसे इतनी दूरपर होती है कि आदमी दो पसलियोके बीचमे २ या ३ उंगलियां रख सकता है।

अब जरा गायके पीछे खडे हूजिए और उसके पिछले भागकी चौड़ाई और शक्लको भलीभांति देखिए—

अच्छी गायके कूले चौडे होते हैं।

ऐसी गायको न खरीदिए, जिसके कूले तग हों।

पूँछके दोनों ओरकी हड्डियोंमें काफी फासला चाहिए।

पूँछके करीबवाली हड्डियाँ नुकीली और तग नहीं होनी चाहिएँ।

अच्छी गायकी जाँघोंमें बड़े थनके लिए काफी फासला होना चाहिए।

मोटी और पास-पासकी जाँघोंवाली गायका थन छोटा होता है।

पिछली टाँगोके खोंचके बीचमे अच्छे ऐनके लिए काफी फासला चाहिए।

टाँगोकी खोंचे अगर मिली होगी, तो ऐन बडा नहीं हो सक्ता।

ऐन, थन और दूधकी नसोको अच्छी तरह देखिए।

अच्छा ऐन बड़ा और चिकना होता है और झुकावमे एक-सा। आगे और पीछे जांघोंमें भी काफी फैला होता है।

नीचे लटका हुआ ऐन चुटियल और गदा हो जाता है। अच्छी गायके लटकता हुआ ऐन हो सकता है, पर वह अच्छा नहीं।

ये अच्छे थन हैं। एक दूसरेसे फासला ठीक ह और दुहनेके लिए काफी वड़े हैं।
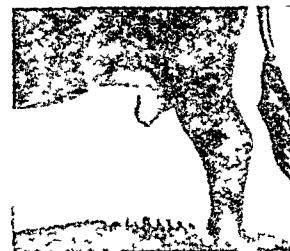
वदशकल और नुकीले ऐनमे ज्यादा दूध नहीं होता।

खूनके अच्छे दौरेके लिए ऐनमें वड़ी नसें होनी चाहिएँ।
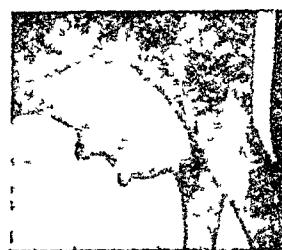
छोटे थनोंसे, जो हाथमे भी न आयँ, ठीक दूध नहीं निकाला जा सकता।

ऐनके आगे भी दूधकी नसे वड़ी और स्पष्ट होनी चाहिऐं। इन नसोंमें होकर खूनका जितना अधिक दौरा होता है, उतना ही दूध भी अधिक होता है।

ऐसी गाय न लीजिए, जिसके दो-एक थन वडे हों और वाकी छोटे। असम ऐनवाली गाय कभी न लीजिए।

दूध दुहना

गो-दोहन भी एक कला है। इसे अँगरेजीमे 'आर्ट आफ मिल्किग' (Art of milking) कहते है। इस कलामे दक्ष होनेके लिए अनुभव और निपुणताकी बडी आवश्यकता है। इस कलामे दक्ष वही कहा जा सकेगा, जो गो-दोहन शान्ति, सरलता, शीघ्रता, शुद्धता और पूर्णतासे करता है। दूध दुहनेके आदिसे अन्त तक पशुको किसी किस्मकी तकलीफ न होने पाय। किसी भी दुग्धालय (Dairy) की सफलता और असफलता उसके दुहनेवालोंपर ही बहुत कुछ निर्भर करती है।

इस देशमे गो-दोहन करनेवाले पेशेवर अहीर, गड़रिये और ग्वाले होते हैं। दुःख है कि जिस कार्यसे इन लोगोकी जीविका चलती है, उसीके सिद्धान्तो और नियमोको इन्होंने भलीभाँति समझनेकी कभी कोशिश नहीं की। इन्हे इसका किंचित् ज्ञान नहीं कि दूध दुहनेमे कितनी शुद्धताकी आवश्यकता होती है। ये न तो स्वय ही साफ रहते हैं, न जानवरोको ही साफ रखते है। यदि इन दोनोंमे से एक भी मैला-कुचैला होगा, तो निश्चय ही दूध अशुद्ध होगा, उसमे अवश्य रोग उत्पन्न करनेवाले कीटाणु होंगे, जो दूध पीनेवालोके शरीरमे कोई-न-कोई व्याधि पैदा कर देंगे। दूध ऐसा कोमल पदार्थ है कि उसपर बहुत जल्द सुगन्ध, दुर्गन्ध, गर्मी, सर्दी और अन्य चीजोका असर पड़ जाता है। उसके साथ तो बड़ी ही सावधानीसे काम करनेकी जरूरत है, ताकि उसमे किसी प्रकारके विकारादि न पैदा हो जायँ।

हमने बहुधा देखा है कि गाय-भैंस दुहते समय दुहनेवाले बार-बार अपनी हथेलियोंपर दूध लगा लिया करते हैं। उनके अशुद्ध हाथोंमें तम्बाकू आदिके गुल तथा अनेक प्रकारकी गन्दी चीजें होती हैं।

अब हम नीचे कोष्टकमे यह दिखलाते है कि गायके दूधके प्रथम और अन्तिम भागमे क्या-क्या वस्तुएँ और किन-किन परिमाणोमे होती है। निम्न-लिखित आँकड़े मेक कोनेल साहबकी 'ऐग्रीकल्चर नोटवुक'से लिए गये है :—

दूधका भाग	घृतांश प्रतिशत	जलांश प्रतिशत	जलरहित घृत-पदार्थ प्रतिशत
प्रथम भाग	१ २०	८९ ४२	१०.५८
अन्तिम भाग	७ ८८	८३.३७	१६.६५
अन्तिम धारें	१० ००	८४ ६०	१९४०

वर्तमान गो-दोहन-विधि जानवरोंके लिए बड़ी हानिकारक सिद्ध हुई है। प्रचलित दुहाईकी विधि यह है कि दुहनेवाले थनोंको अपनी चारों अँगुलियोंसे पकड़कर अँगूठेको दुहराकर हथेली और थनोंके मध्यमे रखते है। थनोंको पकडकर जोर-जोरसे खीचते है। इस प्रकार दुहनेसे दो नुकसान हैं— (१) यह कि पशुओके थनोमे दुहनेवालोके नाखून गड़ जाते है, जिससे घाव हो जाया करता है। (२) थनोको व्यर्थ खींचनेसे वे बढ जाते है, उनमें गुल्थियाँ पड जाती हैं और उनका मुँह बन्द हो जाता है।

आजकल दूध दुहनेके दो तरीके अमलमे लाये जा रहे है—(१) मशीनों द्वारा और (२) हाथोंसे। चूँकि प्रथम रीति सर्वसाधारणके लिए असम्भव है, अत दूसरी विधिको ही काममे लायॅ, मगर वैसे नही, जैसा कि हम ऊपर लिख आये है। आजकल दूध दुहनेकी जो विधि लाभप्रद सिद्ध हुई है, उसे हम सर्वसाधारणके हितके लिए यहाँ देते हैं। पहले ग्वालेके हाथ अच्छी तरह धुला दीजिए और बादको गायका ऐन। फिर बछड़ेको

जितना भी दूध पिलाना हो, पिला दीजिए। फिर गायके थन धोकर, साफ कपड़ेसे पोंछकर दुहना आरम्भ कीजिए। दुहते समय हाथसे थनको पकड़कर उसे हथेली और अंगुलियोंके बीचमे दबाया जाता है, खींचा नहीं जाता। बार-बार जल्दी-जल्दी ऐसा करनेसे दूध निकलने लगता है। इसे पूरा दुहना (Full hand milking) कहते हैं।

दुहनेकी दूसरी एक और रीति है। पहली दो अँगुलियों व अँगूठेसे थन पकड़ लेते है, फिर उन्हें पूरी लम्बाई तक खींचते हैं। इसको स्ट्रिपिंग (Stripping) कहते हैं। यह उस दशामें प्रयोगमे लाई जाती हैं, जब या तो जानवरके थन छोटे होते हैं या फिर दुहाई समाप्त हो चुकती है और दूधका अन्तिम भाग निकालना होता है।

जब गायको बिना बछड़ेके दुहना हो, तब दूधकी पहली कुछ धारें जमीनपर निचोड़ देनी चाहिएँ, ताकि जो कीटाणु थनोंकी नलियोंमे इकट्ठे हो गये हो, वे निकल जायँ और दूधमे मिलने न पायँ। डाक्टर शुजलने अपने अनुभवके आधारपर यह सिद्ध किया है कि दूधके पहले भागमे प्रति घन्इञ्च १३६०००० कीटाणु होते हैं और पिछले भागमें नहीं।

पशु अपने दुहनेवालेकी तब्दीलीको फौरन ताड़ जाते हैं, और यदि अनाडी ग्वाला हुआ, तो दूधकी बडी हानि हो जाती है। डाक्टर कोयरने इस वातका ठीक पता पानेके लिए सन् १९०४ मे एक प्रयोग किया, तो निम्न-लिखित बातें देखी गई—"एक गाय जिस दिन चतुर दुहनेवालेको दी गई, तो ११ ३ पौंड दूध निकला। उसी गायने एक अनाड़ी दुहनेवालेके हाथो ८.४ पौंड प्रतिदिन दूध दिया। मक्खनका परिमाण भी ४ २ और ३.५ प्रतिशत था। इसके वाद फिर यह भी परीक्षा की गई कि जल्दी और देरकी दुहाईमे कुछ फर्क है या नहीं, तो पता चला कि शीघ्रताकी दुहाईमे १० प्रतिशत दूध और ३० प्रतिशत मक्खन अधिक था।"

डेन्मार्कके एक पशु-चिकित्सक मि० हेगलन्दने दुग्ध-दोहनकी एक नवीन रीति निकाली है। इसके अनुसार ऐनको कई बार मालिश करके दूध निकालते है। इससे दूध भी अधिक निकलता है और जो रोग ऐनसे पूरी मात्रामे दूधके न निकल सकनेके कारण हो जाते है, वे नहीं होने पाते। हां, इतना अवश्य है कि इस विधिसे अधिक समय और अधिक परिश्रम लगता है। मि० हेकेलने इसी रीतिसे ३७ गायोंमे ४ ३ प्रतिशत दूधमे बढती पाई है। डेन्मार्क तथा अमेरिकाकी डेरियोमे यही रीति बर्ती गई है और अच्छे-अच्छे परिणाम भी निकाले गये है।

विलायतमे गायें दाहनी तरफ बैठकर दुही जाती हैं, मगर हमारे यहाँ ऐसा नहीं है। यहाँ बाईं तरफ बैठकर दुहाई की जाती है। हमारी बैठनेकी रीति विलायती रीतिसे उत्तम है। पशुके समीप बाई ओरसे ही जानेकी प्रथा हो गई है, और वह इसलिए कि यह सुलभ है। ज्यादातर लोग यहाँ दाहने हाथसे ही काम किया करते हैं, क्योंकि वह हाथ बाऍसे

बलवान होता है। इसलिए दाहने हाथसे बाई तरफ बैठकर दुहनेसे पिछले थनोका दूध आसानीसे और पूरी तौरसे निकल आता है। यदि हमने अपने पशुओंको बाई तरफ बैठकर दुहनेकी आदत डाल दी है, तो फिर हमेशा उसी तरफ बैठकर दुहना जरूरी है, वर्ना ऐसा न करनेसे दूधमें कमी हो जायगी।

दूध उन बर्तनोमे दुहा जाना चाहिए, जो बिना जोड़के, साफ और चिकने हो। जहाँ तक हो, उनमे कोने भी न होने चाहिएँ। ऐसे बर्तन बड़ी जल्दी साफ हो जाते हैं और दूधका कुछ भी अश उनमें नही रहने पाता। इस कामके लिए जस्ते या पीतलके कलईदार बर्तन ही प्रयोगमे लाने चाहिएँ। ताँबेके बर्तन तो भूलकर भी इस्तेमाल नही करने चाहिएँ। पाश्चात्य देशोमें तो दूधके लिए बर्तन जस्ता, कलई, काँच और चीनी मिट्टीके इस्तेमाल किये जाते हैं। हमारे यहाँ देहातोमे ज्यादातर मिट्टीके बर्तन इस काममे आते हैं। हालाँ कि उनमे बहुधा दूध बिगडता नही, फिर भी वे स्वच्छताके खयालसे ठीक नही होते। जहाँ तक हो सके, दूधमें हाथ न डाला जाय। बर्तन हमेशा ढॅका हुआ रहे। दुहनेवाले बर्तनका मुॅह गोल होना चाहिए। मुॅहपर कपडा बॅधा हो, उसीपर से होकर दूध दुहा जाय। खुले मुॅहवाले बर्तनोमे हवामे उडते हुए कीटाणु आसानीसे चले जाते हैं, जो आगे चलकर दूधको बिगाड़ देते हैं। इन बर्तनोको हमेशा खौलते हुए सोडा-मिले पानीसे धोना चाहिए। ऐसा करनेसे कीटाणुओका डर जाता रहता है।

चारेमें विटामिन 'ए' की कमी

कई वर्ष पूर्व भारत-सरकार द्वारा प्रकाशित स्वास्थ्य-रिपोर्टमे छपा था कि आँखोके रोग अपेक्षाकृत यू० पी० मे अधिक होते हैं, और उसका कारण है लोगोके भोजनमे विटामिन 'ए' की कमी।

अपढ लोग भी जानते हैं कि घी और दूधसे आँखोंकी ज्योति वढती है, इसलिए वे अपने वच्चोंको—विशेषकर पढनेवाले वच्चोको—घी खिलानेकी कोशिश करते हैं। चौलाई, मेथी, पत्तीदार भाजियाँ, गाजर, पपीता, आम, अडा, घी आदिमे विटामिन 'ए' अधिकतासे मिलता है। जब भोजनमें विटामिन 'ए' की मात्रा आवश्यकतासे कम होती है, तव रतौंधी (Nightblindness), आँखोके अनेक रोग, शरीरकी वढनका रुकना और गुर्देकी वीमारियाँ प्राय हो जाती हैं। यह तो हुई मनुष्योकी वात। अव सवाल यह है कि क्या विटामिन 'ए' की कमीसे जानवरोंको भी कुछ रोग हो जाते हैं ?

× × ×

"हमारी गायोकी कुछ अजीव हालत हो गई है। लोगोने कहा है कि गायोके रहनेका स्थान वदल दो। कई गायोंका गर्भपात हो गया है। एक गायके अन्धा वच्चा पैदा हुआ है। आप हमारे नौहरेको देख ले।"—भादरा (वीकानेर) के हमारे मित्र वदरी वावूने कहा।

"क्या आपकी गाये पिछले वर्ष सिर्फ सूखे चारेपर रही थीं ?'—उनसे प्रश्न किया गया।

"हाँ, चारेके दुर्भिक्षके कारण ऐसा हुआ था।"—बदरी बाबूने कहा।

स्वय हमारी गायके बच्चे भी लगातार दो ब्यॉतोंमें पैदा होते ही मर गये। गायकी सेवा-सुश्रूषा काफी की गई थी, पर फिर भी बच्चे नही बच सके। घरवालोंकी समझमें इसका कारण नहीं आया। जब उन्हें बच्चोंके मरनेके कारण बताया गया, तब भी उन्हे सन्तोष नहीं हुआ।

× × ×

एक और बातपर विचार कीजिए। शहरोंमे—विशेषकर कलकत्ते और बम्बईमे—बढिया गायोंके बच्चे मरघिल्ले होते हैं और वे अधिक नही जीते। इन सब बातोंका एक ही जवाब है, और वह यह कि गायोंके चारोंमे विटामिन 'ए' की कमी रहती है। जो गाय केवल भूसेपर रखी जाती है—चाहे उसे कितना ही दाना मिले—उसका स्वास्थ्य अच्छा नही रह सकता और न वह आवश्यक मात्रामें दूध ही दे सकती है। यह बात हमने बीसियों बार शहरके आदमियोको समझाई, किन्तु उनकी समझमे नहीं आई।

'इडियन फार्मिंग' के गत दिसम्बर सन् १९४० के अकमें इस विषयपर एक लेख निकला है, जिसका साराश हम यहाँ दे रहे हैं:—

मारवाड़मे अभी हाल ही मे जो अकाल पड़ा था, वैसा भीषण अकाल इधर कितने ही वर्षोंमे नही पड़ा। सन् १९३९ मे वर्षाके एकदम न होने तथा पहलेके तीन वर्षोंमे वहुत कम होनेके कारण यहाँकी अवस्था बहुत ही भीषण और असहनीय हो उठी। भारतवर्षके दूसरे हिस्सोसे बहुत अधिक परिमाणमे खाद्य-पदार्थ यहाँ भेजे गये, जिससे यहाँके निवासी

और पशु बचाए जा सकें। उचित रूपमे चारा और पानी नहीं मिलनेसे बहुत-से पशु तो मर गये और बहुत-से, जिन्होंने इस भीषण परिस्थितिका किसी प्रकार सामना किया, बिलकुल कमजोर हो गये। जिन्हे भूखो मरनेसे बचानेके लिए सूखी घास खिलाई गई, वे बड़ी तेजीसे बीमारियोके शिकार हुए। मारवाड़के लोगोंकी आर्थिक स्थिति जिन मवेशियोंपर निर्भर करती है, उनको सबसे ज्यादा हानि पहुँची।

मारवाड़के इस अकालने सन् १९३९ मे ही चारेको एकदम नष्ट कर दिया था। विटामिन 'ए', जो स्वभावत हरी घासमे पाया जाता है और जिसके अभावमे पशुओको आँखोकी भयकर बीमारियाँ हो जाती है, मवेशियोको बिलकुल नहीं मिला। इसके परिणाम-स्वरूप मवेशियोंमे आँखकी बीमारियाँ—खासकर अन्धापन—लगातार बढती गई।

मारवाड़मे साधारण वर्षोंमे पशु सालमे पाँच महीने हरी घास चरनेको पाते हैं, मगर सन् १९३६ मे उन्हें दो या तीन महीने ही चरनेको हरी घास मिल सकी। सन् १९३७ मे यह समय दो महीनेसे भी घट गया। सन् १९३८ मे तो हरे चारेका जैसे नाम भर ही रह गया और १९३९ मे वह नाममात्रका हरा चारा भी बिलकुल गायब हो गया। परिणाम-स्वरूप पशुओको 'खाकला' (भूसा) और सूखी घास ही खिलाई गई।

इस सूखे चारेके परिणाम-स्वरूप जोधपुरके पशु-पालन-केन्द्रमे जानवरोंमे दुर्बलता आई और लगभग ४५ अन्धे हो गये। पशुओकी आँखोंकी ऊपरी सतह, जो आम तौरसे (हरा चारा खानेसे) गीली रहती है, सूखा चारा खानेसे खुश्क हो गई और उसके आसपासकी नरम चमडीपर पपड़ी-सी जम

गई। कुछ समय बाद सारी आँख सूख गई, उसमें सल पड गये और पीलापन आकर दृष्टि जाती रही। थोडा-बहुत दर्द भी पशुओंकी आँखमें हुआ। यही दशा उन पशुओंकी भी हुई, जो शहरोंकी गलियोंमें भूखों मरते फिरते रहे। पशुओंका मुँह भी सूखने लगा।

इसके अलावा उनके पीछेके पाँवोंमें बहुत कमजोरी आ गई, जिससे चलने अथवा खड़े रहनेमें उन्हें कष्ट होने लगा। गर्दन तथा कई अन्य हिस्सोंमें सूजन भी हुई तथा पीब भी पड गई। सबसे बडी हानि इससे यह हुई कि हरे चारेमें मिलनेवाला विटामिन 'ए' न मिलनेसे गायोंमें इतनी कमजोरी बढ गई कि बहुतोंका गर्भपात हो गया और बहुत-सी गर्भिणी गायें स्वयं मर गई। कइयोंके बच्चे हुए, तो दो-चार रोजसे ज्यादा जीवित न रह सके।

विटामिन 'ए' की कमीसे होनेवाली इन बीमारियोंके कुछ उपचार इस प्रकार हैं :—

(१) बीचका एक हफ्ता छोड़कर पशुकी नसोंमें तीन हफ्तों तक प्रति सप्ताह बायर कम्पनीका तैयार किया हुआ 'एन्टीमोसन' २० घन सेंटीमीटर सुई (इंजेक्शन) द्वारा पहुँचाया जाना चाहिए। जोधपुरके पशु-चिकित्सा-विभागने अभी इन इंजेक्शनोंके अलावा पशुओंको सूखी घास देना बन्द करके उसके स्थानपर 'चौपटा' (ज्वार) दिया और दिनमें दो बार ८ औंस काडलिवर आयल।

(२) साधारणतया जिन पशुओकी वीमारी विशेप गम्भीर न हो, उन्हे हरी घास और पर्याप्त मात्रामे सुवह-शाम काडलिवर आयल दिया जाना चाहिए। इससे शरीरकी दुर्वलता और आँखोकी शिकायत दूर हो जाती है।

(३) इससे पशुओकी रक्षा करनेके लिए उनके शरीरके सव भागोमे विटामिन 'ए' का यथेष्ट परिमाणमे पहुँचना आवश्यक है। 'एन्टीमोसन' के इ जेक्शन इसमें सहायक होते है। यह पेटमे जाकर सारे शरीरमे ताकत पैदा करता है और 'चीपटा' (जवार) तथा काडलिवर आयलके विटामिन 'ए' को भलीभाँति पचा देता है।

(४) गर्भिणी गायो तथा अन्य मादा-पशुओको—जिनके शरीरमे विटामिन 'ए' की कमीके कारण दुर्वलता या कोई रोग हो गया हो—उस समय तक काडलिवर आयल दिया जाना जरूरी है, जव तक कि उनके वच्चा न हो जाय। ऐसा न करनेसे उनकी सन्तानके अन्धा पैदा होनेकी सम्भावना वनी रहेगी।

(५) सवसे अन्तिम उपाय इस दिशामे यही होना चाहिए कि चारा न होने या दुर्भिक्षकी अवस्थामे हरा चारा पशुओकी पूर्ण मात्रामे दिया जाना चाहिए। इससे वे केवल शरीर और खासकर आँखोसे स्वस्थ और नीरोग ही नहीं रहेंगे, वल्कि उनकी नस्लके दुर्वल या अन्धा होनेकी सम्भावना भी नही रहेगी।

उपर्युक्त महत्त्वपूर्ण उद्धरणसे पाठक समझ गए होंगे कि जानवरोके चारेमें हरे चारेका क्या मूल्य अथवा महत्त्व है? देहातमें यह तो सम्भव नही कि जो इलाज ऊपर वतलाया गया है, वह सुगमतापूर्वक किया जा सके—अर्थात्

इंजेक्शन वगैरा और काडलिवर आयल देनेका, पर एक बात तो पशु-पालनमें हमें करनी ही पड़ेगी, और वह यह कि जानवरोंको—विशेषकर गायोंको—हरा चारा जहाँसे और जैसे भी हो सके, अवश्यमेव दिया जाय। यदि उन्हे यथेष्ट मात्रामें जवार, हरी घास आदि नहीं मिलेगी, तो न केवल गायोंका गर्भपात ही होगा या वे ही दुर्बल होगी, वरन् उनके बच्चे भी कमजोर और अन्धे होगे। फलस्वरूप गायका सारा ब्याँत मारा जा सकता है। हमें आशा है, गो-पालक लोग इस अनुभवसे लाभ उठायेंगे।

पशु बाल न खाने पायँ

देहातमे स्त्रियां बाल काढकर कघी अथवा कघेसे नुचे बालोको हर कहीं नहीं फेकती। नुचे अथवा उखड़े बालोको एकत्रकर उनकी गोली-सी वे बनाती हैं और उन्हे दीवारकी किसी दरारमे या किसी बिलमे और कुछ न हुआ, तो दीवारके लेवनामे उन्हे खुरस देती हैं। बड़ी-बूढी स्त्रियां जब किसी लड़कीको अपने सिरके बाल इधर-उधर फेंकते देखती हैं, तब त्यौरी बदलकर लडकियोंको आड़े हाथों लेती हैं। इस प्रकार देहातमे किसी बच्चेकी यह हिम्मत नहीं कि स्त्रियो अथवा लडकियोंके कढे बालोको हर कहीं फेंके। बचपनमे कई बार माँकी लताड़ इन पक्तियोंके लेखकको भी सहनी पडी, पर बचपनमे यह बात समझमे नहीं आई कि बालोको इस प्रकार सुरक्षित स्थानोमे फेकने अथवा रखनेका कारण क्या है। हां, दो-चार बार ऐसी बीमारी जरूर मालूम हुई, जब गलेके नीचे पानी उतारना या थूक लीलना मुश्किल हो गया। मां और अन्य कुटुम्बकी स्त्रियोने गलेके दर्दको बाल लीलनेका कारण बताया और चाकूसे पानी काटकर पीनेका टोटका भी किया गया। गलेमे बाल अटक जानेसे तकलीफ तो होनी ही चाहिए और सम्भवत. समय पाकर वह ठीक भी हो जाती होगी, पर यह बात हमे अबसे बीस वर्ष पहले मालूम हुई और सो भी एक देहाती पशुओंके चिकित्सकसे कि अगर गाय या भैंस दो-तीन तोले बाल निगल जाय, तो उसका बचना कठिन हो जाता है। उस समय देहाती स्त्रियोकी बाल-सम्बन्धी सतर्कताका रहस्य हमे मालूम हुआ। अपने झड़े

हुए बालोंको सँभालकर रखने अथवा फेंकनेका कारण अज्ञानवश वे कुछ भी बताएँ . पर मूल कारण यही है कि उनके बालोंको पशु न खायें।

पिछले दिनों एक डेरीकी एक बढ़िया गाय बीमार पडी। उसका इलाज किया गया, पर रोगका ठीक निदान नहीं हुआ और बढ़िया गाय मर गई। परीक्षाके लिए गायका पेट चीरा गया, तो उसमें स्त्रियोंके बालोंके दो बडे-बडे गुच्छे निकले और गायकी मौतका कारण वे बाल बताये गये।

क्या हमारी पढ़ी-लिखी और विशेषकर शहरोंमें रहनेवाली बहनें इस बातका खयाल रखेंगी कि कटे हुए बालोंको वे सडकपर और घरमें न फेंका करें, ताकि सडकपर आने-जानेवाले पशुओंकी जानकी गाहक वे अज्ञानवश न बनें?

चारेके दुर्भिक्षका एक उपाय

हमारे राष्ट्रीय जीवनमे अनेक कमियां है। उनमे से एक बड़ी कमी है विचारशीलता और रचनात्मक कल्पनाशक्तिकी। प्रकृतिने भी हमारे साथ कुछ षड्यन्त्र-सा कर रखा है। उदाहरणके लिए वर्षा-ऋतुको लीजिए। बारिशके तीन-चार महीनोमे भारतवर्षमे इतना मेह वरसता है कि उससे हम—यदि मेहके पानीको आवश्यकतानुसार काममे ला सकें तो—हर मौसममे सम्पूर्ण भारतवर्षकी सिचाईका काम चला सकते हैं। पर वारिशका पानी अधिकतर बह जाता है। जिन दिनो बारिश होती है और जहां बारिश होती है, वहांपर उन दिनों न तो नहरोंसे सिचाईकी आवश्यकता है और न ताल-पोखरोंके पानीकी ही जरूरत पड़ती है। पर यदि किसी प्रकारसे बरसातके अतिरिक्त जलको हम काममे ला पाते, तो हम राजपूताने और देशके अन्य सूखे प्रदेशोंको सरसब्ज बना देते।

बरसातके अतिरिक्त जलको रोककर सूखाके दिनोमे अथवा आवश्यकतानुसार काममे लानेकी बात स्वतन्त्र भारतकी एक समस्या होगी। पर चारेकी कमीको दूर करनेकी समस्या हल न करना कोरी मूढ़ता है, और इस बातकी द्योतक है कि सूबोंकी सरकारें चारेकी समस्याको ठीक तौरसे समझतीं ही नहीं और चारेकी कमीको दूर करनेकी सफल चेष्टा भी नहीं करतीं।

सर सिकन्दरहयात खां पजाबियो और मुसलमानोकी विरुदावलिमे अपनी वाक्शक्तिका पूरा प्रदर्शन करते है; पर हिसारके इलाकेमे जो भयकर चारेका दुर्भिक्ष पड़ा है और जिसके कारण हिसारके समीपवर्ती इलाकेमे देहातियोकी

जो क्षति हुई है, उसके निवारणके लिए उन्होंने क्या किया है? हिसारकी क्षतिका अनुमान फाटकेवाले सेठ अथवा ब्याजके रुपएसे मोटे हुए पूँजीपति नही समझ सकते। देहातियोंकी विशेष पूँजी है गाय और बैल। और अगर गायों और बैलोंका ही नाश हो जाय, तो उनके मालिकोंकी दुर्दशा अवश्यम्भावी है। पर सवाल यह है कि क्या हिसारका दुर्भिक्ष रोका जा सकता था? हिसारके इलाकेमे दुर्भिक्ष पडा है मेंह न बरसनेसे। ठीक है। पर जरूरत तो इस बातकी है कि हर साल बढिया चारा इतनी मात्रामे एकत्र कर लिया जाय कि यदि मेंहके अभावमे दुर्भिक्ष पड भी जाय, तो चारेकी कमी न हो।

क्या यह सम्भव है कि चारेके दुर्भिक्षको रोका जा सके? इन पक्तियोंके लेखकका दृढविश्वास है कि अगर सरकार और जनताका वारिशके दिनोंमे सहयोग हो, तो चारेके दुर्भिक्षकी रोक चाहे न हो, उसकी भीषणता तो कम की जा सकती है। कैसे? पजाब, यू० पी०, विहार और बगालमें बरसातके दिनोमे जो घास पैदा होती है, क्या उसका पूरा उपयोग होता है? पेशावरसे लगाकर दार्जिलिगके नीचे तकके इलाकोमे—हिमालयकी तलहटीमे—कितनी घास होती है, पर क्या वह सब काममे आती है? नहीं। अगर उस पकी घासको काटकर रख लिया जाय, तो सूखी घासका बाहुल्य हो जायगा, पर सूखी घासमे पोषणकी वह शक्ति नही, जो हरी घास या हरे चारेमे होती है। ठीक है, इसीलिए प्रत्येक जिलेमें हरी घास और अन्य हरे चारेको सुरक्षित रखना चाहिए—साइलेज (Silage) बनाकर।

लाखों मन घास पहाडोंकी तराईमे और अनेक सूबोंमे सूखकर बर्बाद हो

जाती है। जहाँपर जुआर और वाजरेकी करब काटकर सूखी खिलाई जाती है, वहाँपर भी अगर साइलेज बेनानेको प्रोत्साहन दिया जाय, तो ढोरोंको वैसाख और जेठके महीनोंमे हरा चारा मिल सकता है। रिसर्चपर लाखों खर्च होते हैं; पर साइलेज वनानेके लिए सरकारकी ओरसे प्रोत्साहन नहींके बराबर है।

चाहिए यह कि प्रत्येक जिलेमे सरकार एक-एक हजार रुपए खर्च करके आठ स्थानोंमे पक्के साइलो-गढे वनवाय और कृषि-विभागकी देख-रेखमे पचायती साइलेज तैयार कराय। तोल-तोलकर फी-काश्तकार जुआर और वाजरेकी हरी पूलियोंकी साइलेज वनाय और वैसाखसे वह वॅटनी शुरु हो जाय। वरसातमे जो घास पैदा होती है, यदि उसका सइलेज वना लिया जाय, तो काश्तकारको अपने खेतोंमे चारेकी फस्ल भी कम पैदा करनी पड़ेगी।

यदि करीवके किसी जिले या सूबेमे दुर्भिक्ष पड़े, तो फिर चारेकी रेल-पेल दुर्भिक्ष-पीडित इलाकेमे हो सकती है। सरकारकी ओरसे चारेकी समस्याको हल करनेके लिए कोई चेष्टा-विशेष नहीं हो रही।

युक्त-प्रान्तमे ग्राम-सुधार-विभागकी ओरसे देहातोंमे पेड़ लगानेकी एक योजना है। सौभाग्यसे यू० पी० के ग्राम-सुधार-अफसर जगलात विभागके आदमी हैं, जिनकी नौकरीका जीवन पेड़ोंसे भुगतनेमे ही वीता है और जिनके कन्धोंपर देहातकी समस्या उल्काकी भाँति टूट पडी है, अथवा चिपक गई है। देहातोंमे पेड़ लगानेकी योजना है। पेड लगाये भी जा रहे है, पर कौन-से पेड़? वे पेड़, जिनका आर्थिक मूल्य तो अधिक है, पर जिनका मूल्य चारे और सायाकी दृष्टिसे बहुत कम है। चारेके अभावमे गाँववाले नीम और ववूलकी पत्तियोंको अपने ढोरोंको खिला

देते हैं इसलिए देहातोंमे पेड़ लगानेके प्रोग्राममे उन पेड़ोंका भी खयाल रखना चाहिए, जिनसे चारा और साया मिलते हैं ।

क्या आशा की जाय कि सूबेकी सरकारें साइलेज बनानेके लिए प्रोत्साहन देंगी और प्रत्येक जिलेमें एक-एक हजार रुपयेसे ६-७ साइलो-गढे बनवायेंगी, ताकि अन्य लोग सरकारका उचित अनुकरण कर सकें और चारेकी समस्याको हल कर सकें ?

अखिल भारतीय पशु-प्रदर्शनी

भारतवर्षके लिए पशु-धनका महत्त्व इसी बातसे स्पष्ट है कि भारतवर्षकी कृषि-सम्बन्धी सम्पूर्ण पैदावारकी कीमत होगी २० अरब रुपए, जिसमे से आधी अर्थात् १० अरब रुपए केवल पशुओं और पशुजन्य पदार्थोंसे प्राप्त होते हैं। इसका ब्यौरा इस प्रकार है —

दूध तथा दुग्ध-पदार्थ	४०० करोड़
पशुओका श्रम	३०० "
खाल और अन्य मलवा	१०० "
खाद	२०० "

इसके अतिरिक्त पशु-धनमे भारतका स्थान सर्वप्रथम है। सन् १९३५ की पशु-गणनाके हिसाबसे ससारके पशुओंकी सख्या ६९ करोड़ थी, जिसमें से १८.८ प्रति सैकड़ा भारतवर्षकी थी, ६.५ प्रति सैकड़ा सोवियट रूसकी और ५.८ प्रति सैकडा सयुक्त-राष्ट्र अमेरिकाकी। भारतवर्षके १८.८ प्रति सैकड़ेमे से १५ २ प्रति सैकड़ा ब्रिटिश भारतमे और ३ ६ देशी रियासतोंमे थे।

दूधके परिमाणकी दृष्टिसे भारतवर्षका नम्बर दूसरा है, पर प्रति व्यक्तिपर भारतवर्षमे सबसे कम दूध पिया जाता है। नीचेकी तालिकासे बीस देशोंके दूध-सम्बन्धी आँकड़े मालूम होंगे :—

देश	दूधकी पैदावार १९३०–३४ (मिलियन गैलनोमें)	जनसख्या (हजारोमे)	दैनिक पैदावार प्रति व्यक्ति (औंसोमे)	दैनिक खपत प्रति व्यक्ति (औंसोंमे)
फिनलैण्ड	६२०	३६६६	७४	६३
स्वीडेन	९८०	६२३३	६९	६१
न्यूजीलैण्ड	८७०	१५५९	२४४	५६
स्विजरलैण्ड	६०७	४०६६	६५	६९
आस्ट्रेलिया	१०४९	६६३०	६९	४५
नारवे	२९०	२८१४	४५	४३
डेन्मार्क	१२००	३५५१	१४८	४०
ग्रेट-ब्रिटेन	१४७४	४५२६६	१४	३९
चेकोस्लेवेकिया	१२००	१४७३०	३०	३६
सयुक्त-राष्ट्र अमेरिका	१०३८०	१२२७७५	३७	३५
कनाडा	१५८०	१०३७७	६६	३५
नीदरलैण्ड्स	९७०	७९३५	५४	३५
बेलजियम	६५१	८०९२	३५	३५
जर्मनी	५०९६	६६०३०	३४	३५
आस्ट्रिया	५४५	६७६०	३५	३०
फ्रास	३१५०	४१८३५	३३	३०
पोलैण्ड	१९९०	३१९४८	२७	२२
इटली	१०५०	४११७७	११	१०
रूमानिया	३८२	१९०३३	९	९
भारतवर्ष	६४००	३५२८३८	८	७
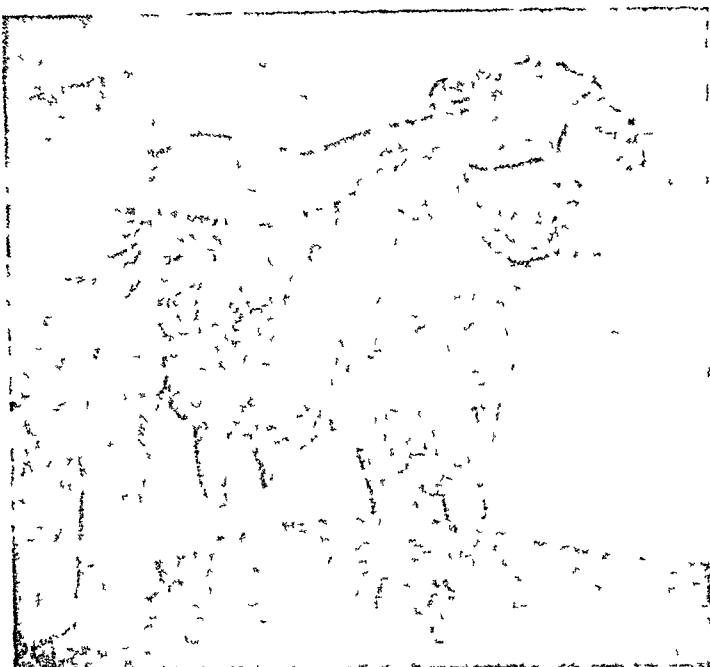
उपर्युक्त तालिकासे हमे अपने देश तथा अन्य देशोंमें प्रतिव्यक्तिपर दूधकी औसतन खपतका पता चलता है। इसके मानी यह हुए कि देशके करोड़ों बच्चोंको दूध नहीं मिलता। फलस्वरूप हमारे देशके लोगोंका स्वास्थ्य गिरता जाता है, कद नाटा हो रहा है और दम घट रहा है। अच्छे बैलोंकी कमी हो रही है। इसलिए यह जरूरी है कि यदि देशकी आर्थिक हालत तथा स्वास्थ्य सुधारने हैं, तो पशुओंकी नस्ल अच्छी की जाय। नस्लको अच्छी करनेकी प्रवृत्तिको प्रोत्साहन देने तथा अच्छी नस्लके लिए आन्दोलन करनेका एक ढंग है पशु-प्रदर्शिनियोंका करना।

गाय अधिक दूध कैसे दे ?

हरियाने या मान्टगुमरीसे जो लोग सयुक्त-प्रान्त या विहारमे गाये लाते है, उनमे से अनेक यह शिकायत करते पाये जाते है कि अपना इलाका छोड़नेपर गायें दूध कम देने लगती हे—विशेषकर उस हालतमे, जब वे अपने नए स्थानोंमे बच्चे देती है। हमने तो पजावके बीकानेरसे लगे इलाकेके लोगोसे यही प्रश्न सुना कि गायोके दूध बढानेकी क्या तरकीव है ?

गायोंके दूध कैसे बढाया जाय, इस मसलेपर कई दृष्टियोंसे विचार करना है। असलमे गाय-भैंसके दूध प्रकृतिने आदमीके लिए नही दिया, वरन उनके बच्चोंके लिए। मनुष्य अपने स्वार्थवश गायों और भैंसोंसे दूध लेता है। उसने अपने बुद्धि-बलसे गायो और भैंसोका दूध बढाया है, जिससे उनके बच्चोको भी दूध मिल जाय और वह अपने लिए भी दूध ले ले। उदाहरणके लिए, हिरनी और जगली भैंसके दूध ज्यादा नही होता। बस, उनके इतना दूध होता है, जितनेसे उनके बच्चोका काम चल सके। अगर उनमे आवश्यकतासे अधिक दूध होता, तो उनका ऐन भी बड़ा होता। ऐसी हालतमे जगली भैंस या गायको भागनेमे सुविधा नही होती, और वे अपने शत्रुओंके हाथमे बहुत जल्दी आ जाती।

यह तो हुई गाय और भैंसकी जगली हालत, पर मनुष्यने उन्हे अपनी बुद्धिसे पालतू बना लिया है और अपनी जरूरतके लिए उनसे दूध लिया है। प्राकृतिक दृष्टिसे पहली बात तो यह हुई कि गायका दूध उसके बच्चेकी

जरूरतके हिसावसे होता है। अर्थात् अगर किसी गायका बच्चा किसी प्रकार नस्लके हिसावसे कुछ छोटा हो जाय, तो गायका दूध जरूर कम होगा। इसलिए इस बातकी बडी आवश्यकता है कि हमारी गायोंके बच्चे अच्छे हों, और यह तभी सम्भव है, जब गायकी अपेक्षा सांडकी ज़ात अच्छी हो। अगर गाय अच्छी हुई और साँड़ निकृष्ट, तो उनके सयोगसे सन्तान छोटी और खराब होगी। फलस्वरूप गाय दूध कम देगी। बढ़िया गाय और बढ़िया सांडके सयोगसे बच्चे भी अच्छे होंगे और गायका दूध भी ज़्यादा होगा। निकृष्ट सांड और निकृष्ट गायके सयोगसे बच्चे खराब होंगे और दूध कम होगा। सयुक्त-प्रान्तमें पजाबसे लाई गई भैंसों और गायोंका सयोग खराब सांडोंसे होता है। इसलिए इस बातको नहीं भूलना चाहिए कि घटिया सांड़ और बढ़िया गायके सयोगसे जो बच्चा पैदा होगा, वह दोनोंसे खराब होगा। अनुभवसे तो यह पता चलता है कि यदि किसी अच्छी गायका सयोग दो-तीन वार खराब सांडसे हो, तो फिर अच्छे सांडसे सयोग होनेपर बच्चे अच्छे नहीं होते और न दूध ही बढ़ता है।

दूसरा कारण दूध कम देने और खराब बच्चे देनेका है अच्छे दाने-चारेका अभाव। अगर हरियाने या शाहीवाल नस्लकी गाय यू० पी०, विहार या सी०पी० में रखी जाय, उसको वैसा ही दाना-चारा मिले और जलवायु भी अनुकूल हो, तो कोई कारण नहीं कि गाय उतना ही अधिक दूध न दे।

जहाँ तक गायकी खुराकका सम्बन्ध है, वहाँ तक हमारा आग्रह है कि दवा खिलाकर दूध बढाना ठीक नहीं। साधारणतया दूध बढानेके लिए हरे चारेकी बड़ी आवश्यकता है। बच्चे देनेके एक मास पूर्वसे हरी घास गायको जरूर खिलानी चाहिए, उससे प्रसवके बाद गायका दूध बढेगा। बच्चे देनेके तीसरे दिन उड़दका दलिया आधा सेर, चावल आधा सेर, नमक एक छटांक, हल्दी आधी छटाँक और पीपलका चूर्ण एक छटांक— सबको पानीमे मिलाकर रांधना चाहिए। जब वह पक जाय, तो उसमें पाव भर गुड़ मिलाकर सहता-सहता गरम गायको शामको खानेको देना चाहिए। इससे गायका दूध बढेगा।

जीरे तथा अन्य ऐसी ही दवाइयों और शरबत पिलानेसे भी दूध बढता है, पर ऐसा करना ठीक नही। बस, उचित खुराक, हरी घास और अच्छी देखभालसे ही दूध बढाना ठीक है।

गायके बच्चोंके साथ व्यवहार

अनेक लोग, और विशेषकर दूधका व्यापार करनेवाले, बछड़ो और बछियोकी ठीक देखभाल नहीं करते। अगर बछियाँ या बछडे मर जाते हैं, तो उन्हे सुखाकर रख लेते हैं और दूध दुहते समय गायोंके सामने रख देते है। गाये उन्हे चाटती रहती हैं और ग्वाले दूध दुह लेते है। अगर गाय विसुख गई, तो वे उसे बेचकर नई गाय खरीद लेते हैं, क्योंकि ठठ गाय चरानेसे उन्हे कोई लाभ नहीं। पर जिन्हे गायकी नस्लका जरा भी खयाल है, उन्हे बछियो और बछड़ोसे अच्छा व्यवहार करना चाहिए और उनके खाने-पीनेका प्रबन्ध ठीक होना चाहिए। उचित मात्रामे अच्छा खाना खिलानेसे बछिया गाय होकर खूब दूध देती है। गाय या बछियाका मुटापा उतना ही बुरा है, जितना कि स्त्रियोंका। अधिक मोटी गायें दूध कम देती हैं।

एक दूसरी बात यह है बछिया और बछडेके नाम रख लेने चाहिएँ। उनके साथ स्नेहका व्यवहार करना चाहिए। स्नेहके व्यवहारसे बछिया खूब हिल जाती है। नाम लेकर बुलानेसे कान उठाकर उधर आती है और दूध दुहनेमे परेशान नही करती। बछियाको मरखनी, बिदकनी और लतकनी बनाना ज्यादातर इस बातपर निर्भर है कि उसके साथ व्यवहार कैसा होता है।

हमने अच्छी डेरियोंमे देखा है कि गायें कितनी सीधी होती हैं और मरखनी तथा लतकनी गायोकी बछियां भी सीधी होती हैं। उदाहरणके लिए हम अपनी दो गायोंके बच्चोंकी बात लिखते है। बडी गायकी बछियाका

नाम है जसोदा और छोटी गायके बछड़ेका नाम है बुद्धू। बड़ी गाय बिदकनी है। कोई साइकिलवाला उसके पाससे नहीं निकल सकता। साइकिल, सूअर और मोटरको देखकर वह उनपर टूट पड़ती है। अगर बॅधी हो, तो मोटरकी आवाज और बाजोंकी आवाजसे घबराकर वह पतला गोबर करना शुरु कर देती है। छोटी गाय बिलकुल नहीं बिदकती। पर दोनोंके बच्चोंके स्वभाव उल्टे हैं। जसोदा आवाज लगानेपर पास आ जाती है। झाड़ू देखकर गर्दन लम्बी कर देती है, ताकि उसकी गर्दन झाड़ूसे खुजाई जाय। खूँटेसे छूटनेपर बड़ी लड़कीकी चारपाईके पास जा खड़ी होती है। अगर बडी लड़की—जो गायको दुहती है, जसोदाको खोलती है और दूध पिलाती है—घरपर न हुई, तो उसकी यादमें जसोदा रॅभाती है। वह उससे खेलती भी है। पर छोटी गायका बच्चा बुद्धू बड़ा ही बिदकता है। कारण यह है कि बुद्धूको बच्चोंका प्यार शुरुमें नही मिला। जसोदाके मुकाबिलेमें बच्चे उसे चाहते भी नहीं। गुड, रोटी और अन्य खानेकी चीजें पहले मिलेंगी तो जसोदाको।

छोटा बच्चा ब्रजेश और उसकी छोटी बहन सरोजनी जब मौका मिलता है, तभी जसोदासे प्यार करते हैं और जसोदा भी उनसे बेहद हिली है। पाँच वर्षका ब्रजेश, नौ वर्षकी सरोजनी और छ महीनेकी जसोदा आपसमें खूब प्यार करते हैं। और बुद्धू मियाँकी कोई खास इज्जत नही। उसे दुत्कारा जाता है। फलस्वरूप जसोदा और बुद्धूके स्वभावमें इतना अन्तर पड़ गया है।

व्रजेश, जसोदा और सरोजनी

हरियानेकी नस्ल

गाय खरीदते समय हमे इस वातका खयाल करना चाहिएकी गाय हम किस कामके लिए ले रहे है—दूध और घीके लिए या खेती या बोझा ढोनेके वास्ते बैल पैदा करनेके लिए ? हमारे देशमे तो खेती करने और गाडियोंमे जोतनेके लिए बैलोकी भी जरूरत पडती है। इसलिए देहातके आदमियोके लिए तो ऐसी गायकी जरूरत है, जो दूध भी खूव देती हो और जिसके बछड़े अच्छे बैल भी वन सके। एक पन्थ दो काजवाली वात हमारे यहाँ गायके लिए भी लागू है—और विशेषकर देहातके लोगोके लिए। उत्तरी भारतमे जब हम ऐसी गायकी नस्लका खयाल करते हैं, जिसके बैल भी काफी अच्छे हों और जो दूध भी काफी देती हो, तब हमारे सामने हरियानेकी गाय ही आती है।

हरियानेकी गाय कहाँ पाई जाती है ?

असलमे हरियानेकी गाय विशेषकर रोहतक जिलेकी झज्झर और रोहतक तहसीलोमे, हिसार, करनाल, गुडगांवके जिलोमे तथा देहलीके आसपास पाई जाती है। इस नस्लका एक प्रकारसे असली घर इन्ही इलाकोमे है। वैसे हरियानेकी गाय पजाबके इन स्थानोंसे दूर-दूर तक ले जाई जाती है। युक्त-प्रान्तके पश्चिमी जिलोमे और कुछ पूर्वी जिलोमे भी—अलवर और भरतपुरमे—उसकी नस्ल हिसार वगैरासे लाकर तैयार की जाती है। हिसार जिलेमे मोटी और ढीली चमडी, लम्बे मुतान, लम्बे और मोटे सींग और वडे लटकते हुए

हरियानेका बैल

कानोंवाले जानवरोंको हरियानेकी नस्ल नही समझना चाहिए। असली हरियानेकी नस्लके जानवरोंका चेहरा लम्बा और पतला होता है। पेशानी उनकी चपटी होती है और गुद्दीमे हड्डीका उभार-सा साफ दिखाई पड़ता है। हरियानेकी नस्लकी गायों, बैलों और सॉड़ोंके सींग छोटे होते हे। उनकी चमड़ी मुलायम और कसी हुई होती है। उनका मुतान छोटा होता है और सासना छोटा। झींद, नाभा, पटियाला, जयपुर, जोधपुर, लोहारु, भरतपुर और अलवर रियासतोंमे असली नस्लके जानवर पाए जाते है। सयुक्त-प्रान्तके पूर्वी भाग तकमे वे पाए जाते है।

हरियाना-नस्लकी उपयोगिता

हरियाना-नस्लके बैल खेतीके बड़े कामके होते हैं—विशेषकर तेज जुताई और माल ढुवाईके लिए। गायें बड़ी दुधार होती है, इसीलिए वे दूधकी खातिर दूर-दूर तक ले जाई जाती हैं। एक ब्यांतमे औसतन एक गाय दो-तीन हजार पौंड (८२ पौंड = एक मन) तक दूध देती है। वैसे कोई-कोई गाय तो एक ब्यांतमे ८४२६ पौंड तक दूध देती है।

साधारण पहचान और लक्षण

हरियाना-नस्लकी गाय, बैल और साड देखनेमे सुडौल होते हैं। जवान साँडकी ऊँचाई कोहानके पीछे ५६-५७ इञ्चकी होती है। वजनमे वह ८१६ पौंडसे १०७६ पौंड तक होता है। गायकी ऊँचाई ५२-५३ इञ्चकी होती है और वजन ७८४ पौंड। हरियानेकी गाय, बैल या सांड सिर उठाकर सजीवताकी मूर्ति बने शानसे चलते हैं।
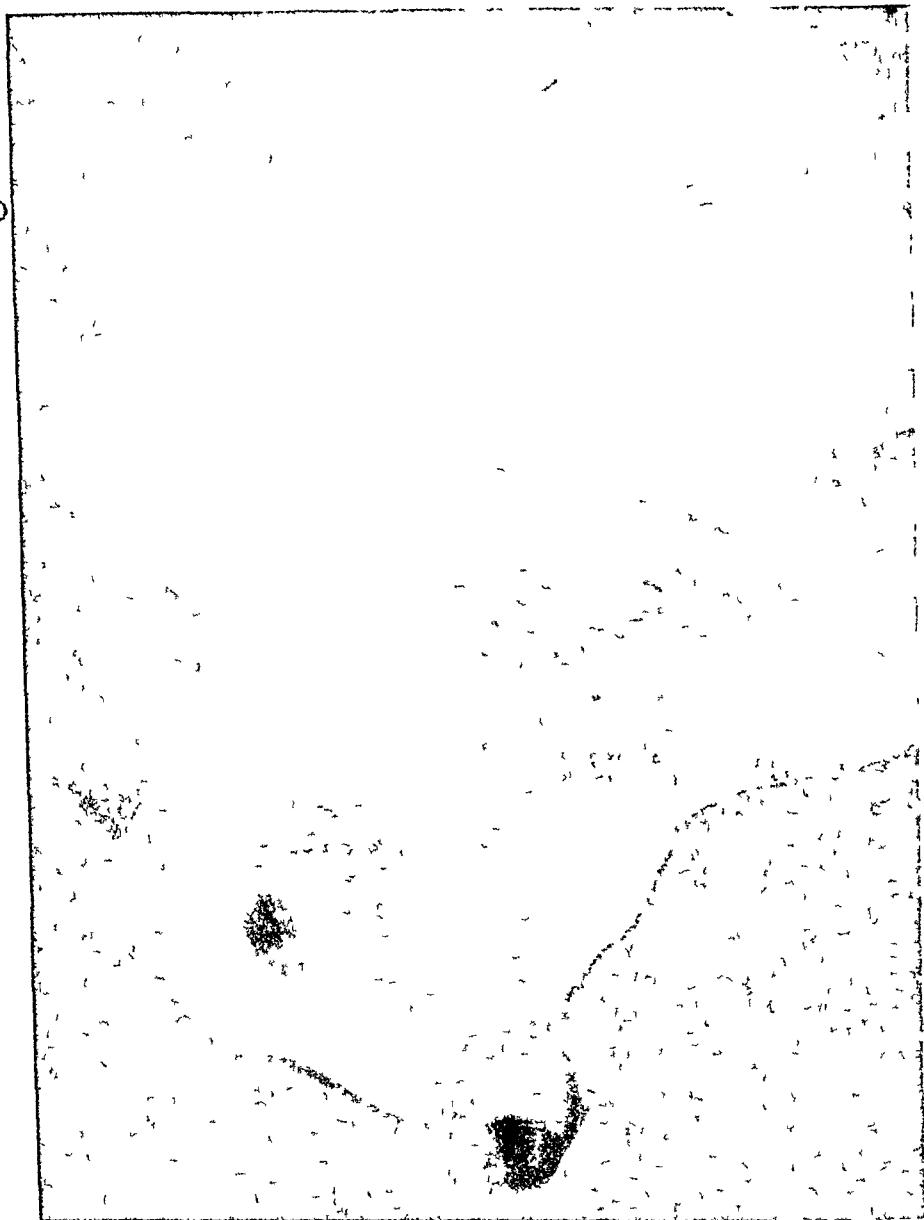
हरियानेके साँड़का सिर

रंग कैसा होता है ?

बढ़िया रंग तो इस नस्लका सफेद या हल्का सफेद होता है। दूध-सा सफेद रोआँ धूपमें दूरसे देखते ही बनता है। हरियानेकी गायमें तो वह फुर्ती और तेजी होती है कि यह मालूम होता है, उसकी गुरिया-गुरियामें बिजली भरी हो। बछडों और साँड़ोंके सिर, गर्दन, कोहान (ढाटे) और पुट्ठे गहरे भूरे होते हैं, पर आख्ता—बधिया—होनेके बाद भूरा रंग सफेद हो जाता है।

सिरकी पहचान

सिर हल्का, साफ और सुडौल होता है। पर साँड़ोंका सिर इतना मुलायम नहीं होता और कुछ भारी होता है। चेहरा लम्बा और पतला होता है और पेशानी चपटी होती है। थूथन काली होती है और नथुने चौड़े होते है।

आँखे बड़ी, चमकीली और साफ होती है, पर जवान साँडोंकी आँखें इतनी स्पष्ट नहीं दिखाई पडती।

कान छोटे तथा तेज और थोडे लटकते हुए होते हैं।

सींग खूबसूरत और छोटे होते है—प्राय चारसे नौ इंच लम्बे—और गायोंके कुछ पतले। जब वे छोटे होते हैं, तब आड़े-से होते है और बढनेपर ऊपर और भीतरकी ओरको—सिरकी ओरको—होते है।

शरीरकी बनावट

गर्दन कुछ लम्बी, पतली और खूबसूरत होती है, पर साँडोंकी गर्दन

हरियाना-नस्लकी ओसर (कलोर)

वहुत मोटी और वडे कोहानकी वजहसे देखनेमे छोटी मालूम होती है। वैलोकी गर्दन चौडी, मजवूत और जुआ रखनेके लिए वहुत वढिया होती है। वृषभ-कन्ध शब्दका प्रयोग शायद हरियानेके साडोको देखकर ही किया गया हो।

सासना छोटा और पतला होता है। उसमे मासकी तहे-सी नहीं होती, पर साँडोका सासना काफी वडा होता है।

छाती पुष्ट और चौडी होती है। साँडोंका कोहान वडा होता है, पर वुढापेमे वह ढीला और छोटा हो जाता है। गायका कोहान मझोला होता है।

टाँगे मामूली तौरसे लम्बी और पतली होती है। खुर छोटे, मजवूत और सुडौल होते हैं।

वड लम्वा और विकसित। गायोका अगला हिस्सा हल्का और पतला होता है और पिछला भाग भारी और चौडा, पर साँडो और वैलोका अगला भाग भारी और पिछला हल्का और अपेक्षाकृत पतला।

साँड़ो और वैलोकी पीठ लम्वी, सीवी, गहरी और चौडी होती है, पर गायोंकी थोडी आगेको ढलवाँ-सी।

पसलियाँ मजवूत और खूव गोलाई लिए हुए।

मुतान छोटा और कडा—हिरनके मुतानकी तरह।

गायकी पिछाई अगाईसे कुछ ऊँची होती है। कूल्हे चौड़े और वडे होते हैं।

साँडो और वैलोके पुट्ठे चौडे और कुछ ढलवाँ होते हैं और गायोके और भी ज़्यादा।

वगलें तग होती है, यानी पसलियाँ खूव गसी हुई होती हैं।

रान चपटी, चौड़ी और पुट्ठेदार होती है।। नितम्ब विकसित और

हरियाना-नस्लकी गाय
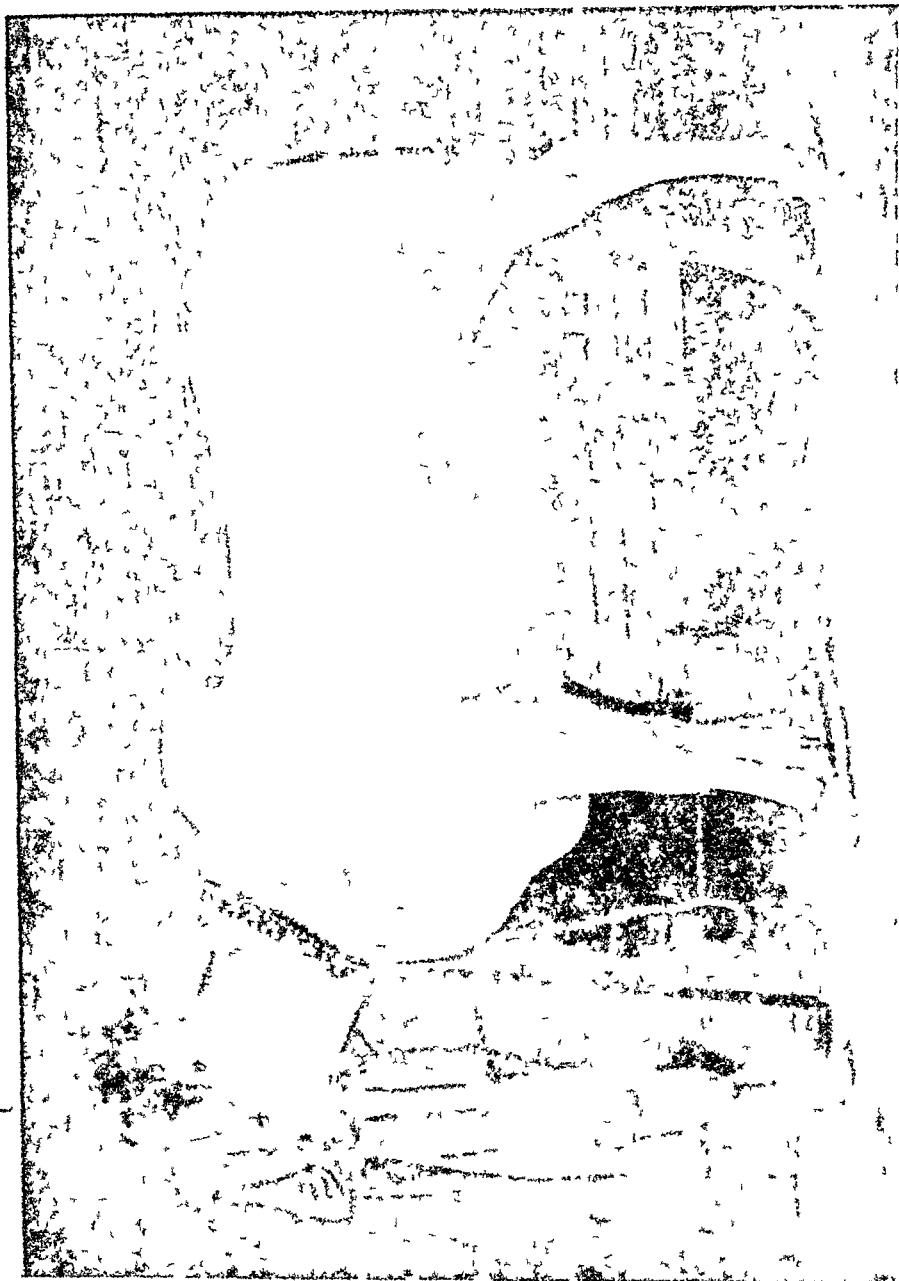
पुट्ठेदार। जांघ और टखनेके बीचका भाग मजबूत और भरा हुआ, पर गायोंका यह भाग महरावदार होता है।

पूँछ छोटी, पतली और गाओदुम। पूँछका झौरा काला और खुरों तक पहुँचनेवाला।

ऐन, थन और दूधकी नसें

ऐन बड़ा और आगेको फैला हुआ दूधकी नसें स्पष्ट और विकसित। थन आकारके अनुपातसे मझोला। अगले थन पिछलोंके मुकाबिलेमे कुछ बडे होते है।

चमड़ी और बाल

चमडी खूबसूरत, पतली और शरीरसे कसी हुई। काली चमड़ीपर सफेद या भूरा रोआं होता है।

हरियाना-नस्लका जानवर खरीदते समय ऊपर लिखी बातोसे काफी सहायता मिलेगी और चित्रोंसे तो हरियानेकी नस्लकी पहचान और भी जल्दी हो जायगी। पर दोष-सम्बन्धी कुछ बाते ऐसी हैं, जिनका जानना जरूरी है। हरियाना-नस्लके लिए नीचे लिखी बाते दोषोंमें आती है, इसलिए जब आपको असली हरियानेकी गाय, बैल या सांड खरीदना हो, तो उस जानवरको न खरीदिए, जिसका (१) मुतान ढीला हो, (२) जिसकी पूँछ मुलायम न हो, (३) जिसका रग सफेद या भूरा न हो, (४) जिसकी पूँछकी झौंरी सफेद हो, (५) जिसकी इतनी लम्बी पूँछ हो, जो जमीनको छूती हो, (६) जिसके पुट्ठे बहुत ज़्यादा ढलवां हों, (७) जिसके सींग हरियाना-नस्लके पशुओंके-से न हों और (८) जिसका सिर बड़ा, भोंडा चपटा और उभरा हुआ हो।
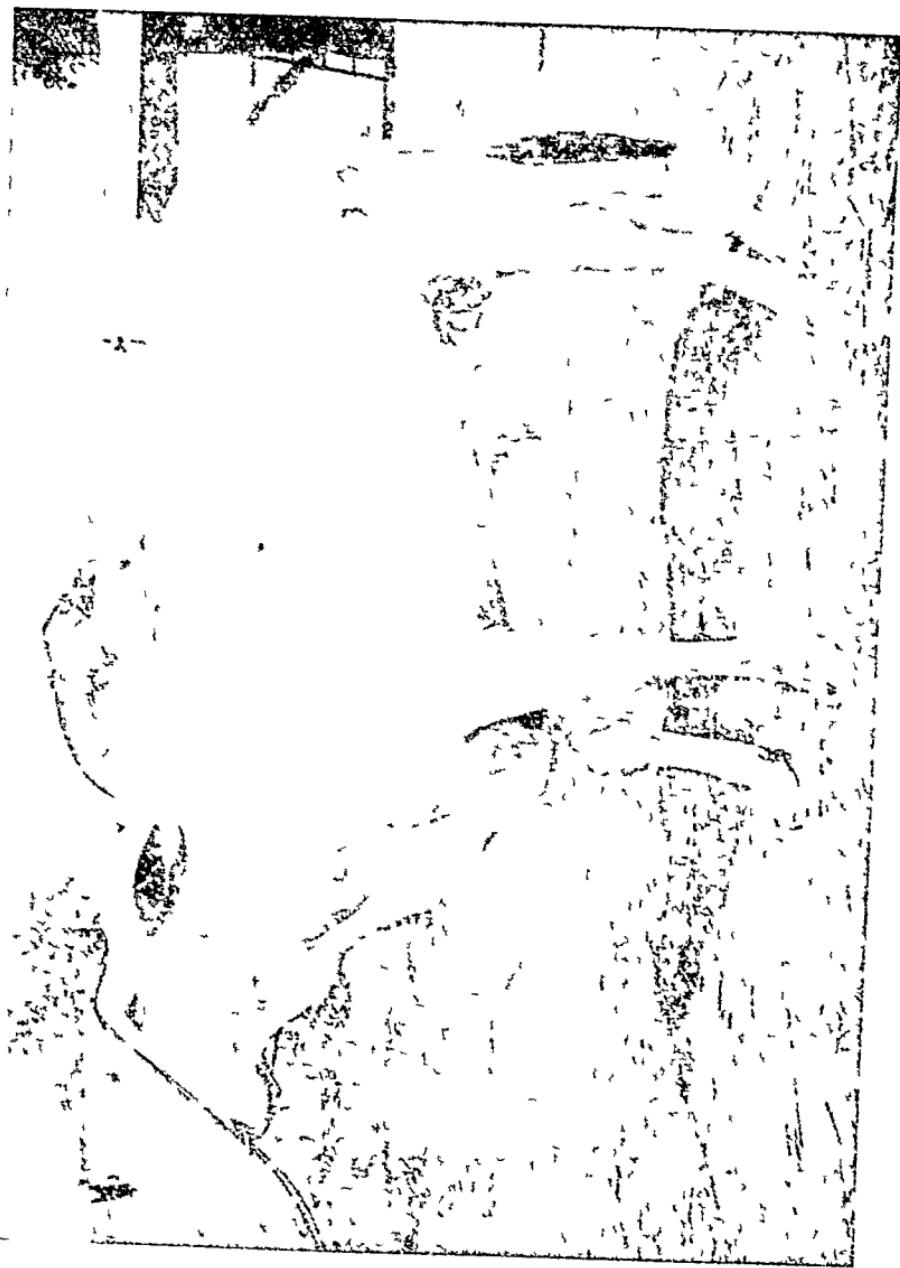
हरियाना-नस्लका पट्ठा सांड

शाहीवाल-नस्ल

जिन्हे केवल दूधके लिए ही गाय खरीदनी हो और बैलोंकी कोई खास जरूरत न हो, उन्हे शाहीवाल नस्लकी गायका खयाल जरूर रखना चाहिए। शाहीवाल नस्लके बैल भी खेतीके काममे आते हैं; जहाँ ज्यादा और तेज जुताईका काम होता है, वहाँ लोग शाहीवाल-नस्लके बैल नहीं रखते। जिन्हे बैलोंकी अपेक्षा दूधकी ही जरूरत है, उन्हे अन्य नस्लोंकी गायोंके साथ शाहीवाल नस्लकी पहचान भी करनी चाहिए, ताकि अपनी सुविधानुसार वे शाहीवाल-नस्लकी गाय खरीद सकें। यदि न भी खरीदना चाहे, तो भी उसके गुण-दोष तो उन्हें मालूम होने ही चाहिए।

कहाँ पाई जाती है?

इस नस्लकी खास जगह तो रावी और नीलीवार नदियोंके करीव पजावके केन्द्रीय और दक्षिणी भाग हैं। मिन्टगुमरीका जिला इस नस्लका खास स्थान है। चूंकि इस नस्लकी गाय विशेषकर दूधके लिए ही प्रसिद्ध है, इसलिए इस नस्लका पालन पजाव भरमें होता है। अव तो इस नस्लको दिल्ली, युक्त-प्रान्त और विहार तकमें रखा जाता है। इन स्थानोंपर भी इस नस्लकी गाये अच्छा दूध देती हैं। एक व्यांतमें औसतन ६ हजारसे ७ हजार पौण्ड तक दूध एक गाय देती है—पर कोई-कोई गाय तो दस हजार पौण्ड तक दूध देती हैं। शाहीवाल नस्लके बैल सुस्त होते हैं और उनसे धीमे-धीमे काम होता है।

शाहीवाल गाय

शाहीवाल साँड़

शाहीवाल गायका ऐन—ऐन और थनोंको ध्यानसे देखिए।

शाहीवाल गायका सिर

शाहीवाल नस्लका पट्ठा सांड़

साधारण विवरण

शाहीवाल नस्लके जानवर सुडौल और भारी होते हैं। उनका सिर चौड़ा होता है और सींग छोटे और कुछ मोटे। खाल मुलायम और ढीली होती है। गाय देखनेमे खूबसूरत और खद्दर (खूब खानेवाली) दुधार मालूम होती है। सांडका ढाटा (कोहान) बड़ा होता है। सासना काफी बड़ा और मुतान लटकता हुआ। शाहीवाल नस्लका प्रसिद्ध रग लाली लिए हुए मटमैला होता है। यो इस नस्लके चितकबरे, भूरे और सफेद जानवर भी पाये जाते है। सांड़ोका रग सिर और पीछेकी ओर शरीरके अन्य भागोके रगकी अपेक्षा अधिकतर गहरा होता है।

सिर

माथा—मझोला तथा पतला और सांडका भारी।

चेहरा और थूथन—चेहरा चौड़ा, थूथन चौडी, नथने चौडे और खूब खुले हुए, होंठ पुट्ठेदार और जबड़े मज़बूत। सांड़के ऊपरी होंठ कुछ भारी।

आंखे कोमल और शान्त।

कान—मझोला और बहुतोंके भीतर काले-से दाग।

सींग—छोटे और तीन इंचसे अधिक ऊँचे नहीं होते। मुंडा (विना सींगके) जानवर भी हुआ करते है। कपिला सींग भी प्रायः पाए जाते हैं।

शरीरकी गठन

गर्दन—पतली लम्बी। सिर और कन्धोंसे जुड़ी गर्दन बहुत खूबसूरत।
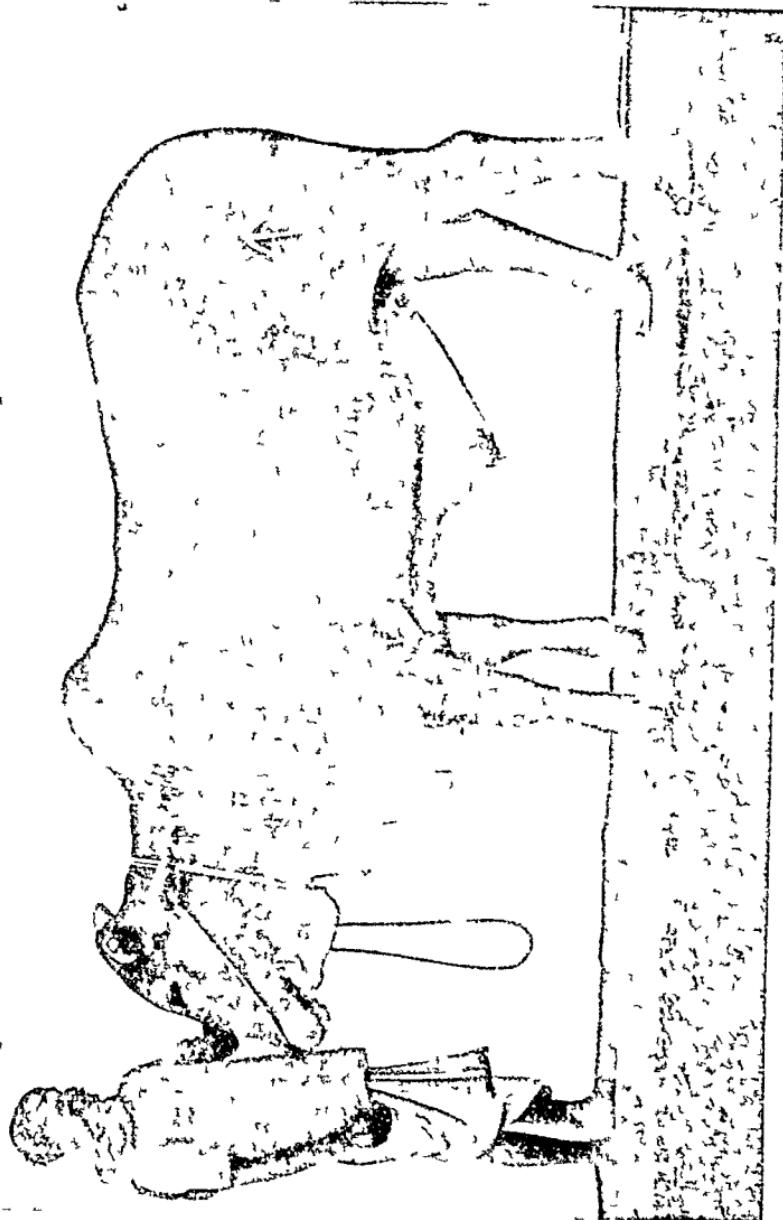
शाहीवाल नस्लका बैल

सासना—मुलायम ; पर साँडोंका बहुत भारी।

छाती—चौड़ी और भरी हुई और अगली टाँगोंके ठीक पीछे सटी हुई।

कन्धे, टाँग और खुर—टाँगे बढिया और शरीरके अनुपातसे चौडी, और भरी छातीके कारण टाँगे एक दूसरीसे यथेष्ट दूरीपर। खुर अच्छे। कन्धे हल्के और ढाटेकी ओरको पतले।

पीठ—सीधी मजबूत और रीढ स्पष्ट।

पसलियाँ—चौड़ी और सटी हुई नहीं। पुट्ठेदार बड़ा पेट।

मुतान—मुतान लटकता हुआ और जवान साँडोका मुतान अधिक ढीला और बेहद लम्बा नही होना चाहिए।

कमर और कूल्हेकी हड्डियाँ—काफी दूर और ऊँची और कमर चौड़ी और मजबूत।

बगलें—काफी चौडी और जांघें चपटी, काफी दूर-दूर ताकि अच्छे ऐनके लिए काफी जगह रह सके।

पूँछ—लम्बी, मुलायम और गाओदुम, जिसमे काली झौरी हो।

ऐन—बड़ा, लचकदार, चौडा, समतल या गोलाकार। ऐनका अगला भाग चौडा, गोल और थनोंसे आगे बढ़ा हुआ। ऐनका पिछला भाग गोल, बाहरको निकला हुआ। ऐनकी चमड़ी कोमल, जिसमे दूधकी नसे स्पष्ट हों। थन सुडौल और एक-से तथा गोलाकार ढगसे लगे हुए। दूधकी नसें बड़ी, लम्बी और लचकदार।

चमड़ी—ढीली, कोमल और बढिया।

बाल—छोटे, सीधे, मुलायम और साँडके सिरके बाल कुछ घुँघराले-से।

इस नस्लका बड़ा दोष है सफेद रग। सफेद रगकी शाहीवाल गाय न खरीदिए।

गीर-नस्ल

गीर-नस्लका असली घर काठियावाड़ है। दक्षिणी काठियावाडके गीर-जगलमे इस नस्लका मूल स्थान था, कदाचित् इसीलिए इसका नाम गीर पड़ा।

हमारे देशमे आजकल शुद्ध नस्ल कायम रखनेपर लोग ध्यान नहीं देते, इसलिए गीर-नस्लके जानवर अब अधिक सख्यामे नहीं पाये जाते। बहुत-से स्थानोमे तो यह नस्ल बिगड गई है। हाँ, दक्षिणी काठियावाड़की जूनागढ रियासतमे असली नस्लकी गीर गायें विशेषरूपमे पाई जाती है। पश्चिमी हिन्दुस्तानकी कुछ अन्य रियासतें भी असली गीर-नस्लकी गाये पालती हैं। बम्बईके निकट कई गोशालाओमे बम्बई-सरकारकी सहायतासे गीर-नस्लकी गाये रखी जाती हैं।

वैसे गीर गायोकी दोगली नस्ल पश्चिमी राजपूताना, बड़ौदा और बम्बई सूबेके उत्तरी भागमे पाई जाती है। असलमे बात यह है कि गाये रखनेवाले लोग चरागाहोकी तलाशमे दूर-दूर तक अपने जानवरोंको ले जाते है, इसलिए और नस्लके साँड़ो और गायोके मिलनेसे गीर-नस्ल दोगली हो जाती है। हमने तो आगरेके निकट तक गीर-नस्लकी दोगली गाएँ देखी है।

गीर-नस्लकी गाएँ खूब दुधार होती है। एक-एक ब्यांतमे—३२५ दिनोंके ब्यांतमे—७ हजार पौंड तक दूधका लेखा मिलता है, पर औसतन एक ब्यांतमे अच्छे झुण्डकी गायोका दूध प्रति गाय ३ हज़ार ५०० पौंड तक होता है।

गीर-नस्लके बैल भारी और मजबूत होते है, पर चलनेमे बहुत तेज

गीर-नस्लकी गायका सिर

नहीं होते। वे मध्यम गतिसे चलते है। माल ढोनेके काममे वे खूब आते हैं। यो खेती-बारीका काम भी वे खूब करते हैं।

विशेषताएँ

गीर-नस्लकी आकृति बहुत ही आकर्षक होती है। इस नस्लके जानवर कदमे मझोले होते है। शरीरका अनुपात ठीक होता है और गठन तथा बनावट मजबूत होते है। इस नस्लके जानवर देखनेमे शानदार, सीधे और समझदार तथा धीमी-हल्की चाल चलनेवाले होते है।

असली गीर-नस्लकी विशेषताएँ हैं भारी माथा, विचित्र ढगसे मुडे सींग, मुडे हुए और लटकते हुए कान।

इस नस्लके जानवर रगमे या तो बिल्कुल लाल होते है, जिसमे हल्के चकते-से या सफेद और लाल या भूरे चकते-से होते है। आम तौरसे सफेद और गहरे लाल रगमे चकते या मटमैले चकते सारे शरीरपर होते हैं। सिर और कानकी बगलें, ढाटेकी चोटी, अगाई और पिछाईका रग चकतोंका-सा रग होता है। गहरे या हल्के रगके धब्बे धडके एक ओर या दोनो ओर इस नस्लके जानवरोके होते है।

सिर

मामूली तौरपर सिर लम्बा होता है, पर देखनेमे वह भारी होता है। इस नस्लके लिए यह पहचान खास है

माथा—बहुत ज्यादा उभरा हुआ, सामने गोलाकार और एक-सी आकृति। आँखोसे ऊपर सींगोकी जड़ोंके नीचे सबसे ज्यादा चौड़ा और सिरके ऊपर दबा-सा। साँडके माथेकी हड्डी खूब विकसित।

गीर-नस्लकी गाय

चहरा और थूथन—चहरा पतला, साफ। दोनों ओर सीधा और आँखोके नीचे गोल, जिसका मझोले आकारकी वर्गाकार काली थूथनमे अन्त होता है। नथुने चौडे। नीचेका जबडा मजबूत और गले तक सासने—लिलरी—गलकम्बलका एक अश।

आँखें—कानोकी जड़ो तक अगर एक रेखा खींची जाय, तो आँखें करीव-करीव उसी रेखामे आती हे। वैसे वे कुछ ऊपर जमी-सी दिखाई देती हैं। वे बड़ी और उनमे भारी पलक होते हैं, जिससे वे वडे बादामके आकारकी, शान्त और उनींदी-सी मालूम होती हैं।

कान—बहुत बडे और मुडे पत्तेके समान लटकते हुए और फैले होनेपर थूथनके सिरेको छूते हुए, जड़मे गोलाकार वस्तुके समान तह किये हुए-से और बीचमे सबसे ज्यादा चौडे, भीतरको मुडे हुए और फिर अन्तमे सुतवाँ—गाओदुम।

सींग—मुटाई और लम्बाईमे मझोला। सिरसे निकलकर वे नीचे और पीछेको मुडते है और तब थोड़ा ऊपरको झुकते हैं और आगेको। भीतरकी ओरको गोलाकार होते हुए वे अन्तमे पतले हो जाते है।

शरीर और पसलियाँ

गर्दन—सुन्दर, पतली, सानुपात और कन्धोंसे अच्छी तरह मिली हुई और चलनेमे पीठके ऊपर सिर उठा हुआ। ढाटेके विकासके कारण साँडकी गर्दन छोटी और मोटी, क्योकि सासना पतला और तहोमे लटकता हुआ, पर वहुत ज्यादा लटकता हुआ नही, गायकी अपेक्षा साँडके अधिक।

टाँगे और कधे—टाँगें सानुपात और पुट्ठेदार और कन्धे धड़से खूब

मिले-सटे हुए। ढाटा खूब विकसित, पर मझोले आकारका। सामनेकी ओरको ढलवाँ-सा और पीछेकी ओर पीठकी ओर एकदम खत्म होता हुआ। टाँगोंका ऊपरी भाग कुछ लम्बा और अच्छी तरह बना हुआ। टखने गोल और मजबूत, नली (टखनेसे लगाकर टाँगका नीचेका हिस्सा, आदमियोंमे जिसे पिंडली कहते हैं) सीधी, जिसमे अच्छे आकारकी हड्डी। खुर और टखनेके बीचका भाग (Pastein) छोटा और बाहरको निकला हुआ। खुरोंका रग काला, आकार मझोला, सुडौल और गोल, न बहुत कडे और न बहुत नरम। दोनों खुरियाँ दूर-दूर, पर फैलती हुई नहीं।

धड़

लम्बा और सुडौल।

पीठ—मजबूत, लम्बी, चौडी और ढाटेकी ओरको कुछ गहरी-सी।

पसलियाँ—फैली हुई और रीढसे सटी हुई। लम्बी एक-सी झुकी हुई, जिससे धड़ अगाई और पिछाईकी एक रेखामे दिखाई पडे। धडका निचला भाग चौडा और अगर सासनेके निचले भाग और मुतान तक एक रेखा खींची जाय, तो धड़ उसी रेखामे आय, क्योंकि पतली चमड़ी मुतानसे सासनेके नीचे भाग तक एक-सी रहती है।

मुतानकी लटकन स्पष्ट, पर लटकती हुई नहीं। साँड़ो और बैलोंका मुतान स्पष्ट और कुछ लटकता हुआ।

पिछाई

चौडी और भरी हुई।

कूल्हा और कूल्हेकी हड्डियाँ—कूल्हा लम्बा, चपटा और समान।

गीर-नस्ल

कूल्हेकी हड्डियाँ काफी दूर और ऊँची। साँड़ों और बैलोंमे वे इतनी स्पष्ट नहीं होतीं, जितनी कि गायोंमे।

बगलें—चपटी, गहरी और हल्की।

जाँघ और नितम्ब—जाँघें खुली, चपटी और खौंच (Hoch) पर एकदम ढलवाँ। नितम्ब चौडे, पर पीछेसे देखनेसे कुछ झुके-से। जाँघोंके बीच काफी स्थान।

पूँछ—लम्बी, मजबूत, जड़के पास चपटी और बादमे गाओदुम, जिसमे अच्छा झौरा लगभग जमीनको छूती हुई।

खौंच, टाँगें और खुर—खौंच मजबूत और चपटे। बगलसे देखनेसे खौंच सीधे दिखाई पड़ें। पीछेसे देखनेसे दोनों टाँगोंके बीच वे काफी चौड़ाई प्रकट करें। टाँगें सीधी और जमीनपर खड़े होनेपर वर्ग बनायें। खुर मझोला, गोल, फैले हुए नहीं।

ऐन, थन और दूधकी नसें

ऐन—मझोला, पर दूध धारण करनेकी शक्ति ज्यादा, लचीला, मुलायम, गठा हुआ और सटा हुआ। ऐनका अगला भाग बहुत आगेकी ओरको नहीं। ऐनका पिछला भाग खूब पीछेकी ओरको और भरा हुआ। ऐनमे खूनकी नसोका जाल-सा पुरा हुआ और उसपर छोटे-छोटे मुलायम बाल।

थन—लम्बाईमे ४ से ४½ इच लम्बे और मुटाईमें समान। ऐनमे अपेक्षाकृत करीब-करीब लगे हुए।

दूधकी नसें—बहुत स्पष्ट और बड़ी, जिसमे अनेक शाखाएँ हों।

गीर-नस्लकी ओसर (क्लोर)

गीर-नस्लकी गायका ऐन।
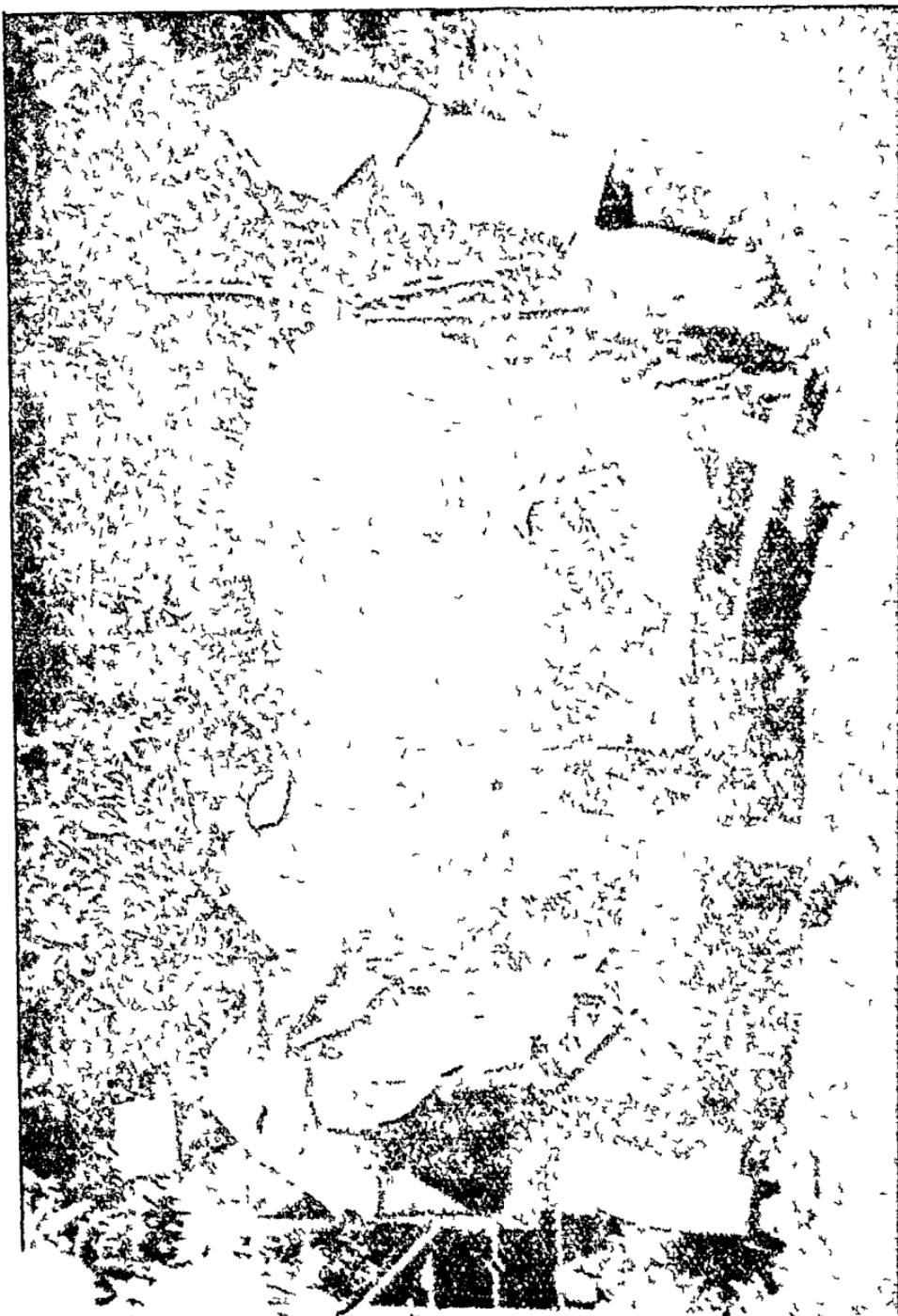
चमड़ी और बाल

चमड़ी—ढीली, मुलायम, काली या बैंगनी रंगकी ।

बाल—छोटे, गुँथे हुए और चमडीको खूब ढँके हुए ।

असली गीरे-नस्लके जानवरके खरीदारको ऐसा जानवर कभी न खरीदना चाहिए ; अगर (१) लाल रंगको छोड़कर उसका कोई और पूरा रंग हो, (२) उसका माथा चपटा हो, (३) कान सीधे, पर छोटे हों और १० इंचसे कम उनकी चौड़ाई—सबसे चौड़े भागमे हो, (४) सींग सीधे हों और (५) बघेरेके-से चकते उसके शरीरपर हों, यानी पीली चमड़ीपर काले चकते हो । गीर-नस्लके ये दोष हैं, और इनका समझ लेना कुछ कठिन नहीं है ।

नोट—चित्रोंका परिचय इस प्रकार है :—

पृष्ठ ८१ पर सांडके सिरका, पृष्ठ ८४ पर सांड़का, पृष्ठ ८६ पर बैलका ।

चलाने और भारी बोझ ढोनेके लिए बहुत ही उपयुक्त। लेकिन तेजीके लिए वे प्रसिद्ध नहीं है। गायें खासी दुधार होती है। अच्छे झुण्डोंकी प्रति गाय औसतन ३५२६ पौण्ड दूध फी ब्यांत देती है—वैसे किसी-किसी गायका ७१९० पौण्ड तक दूध एक ब्यांतमे होता है।

विशेषताएँ

ऑंगोल-नस्ल भारी और बड़ी होती है। जवान नरका वजन १२०० पौण्डसे लगाकर १५०० पौण्ड और मादाका ९५० पौण्डसे १००० पौण्ड तक होता है। शरीर उनका लम्बा, गर्दन छोटी, पसलियाँ पुट्ठेदार और लम्बी, टाँगे और पैर मजबूत और साफ होते हैं। अगली टाँगोंकी खुरी आगेको निकली हुई और खौंचकी वनत न तो सीधी और न वहुत टेढी।

साधारणतया आकृतिसे वे चौकन्ने और सीधे होते है और चाल-ढालमे शानदार। उनका लोकप्रिय रग सफेद होता है। नरके सिर, गर्दन और ढाटेपर गहरे भूरे चिह्न होते हैं, और टखनो और अगली तथा पिछली टाँगोंके खुरोके ऊपर काले बिन्दु। लाल या लाल और सफेद रगके जानवर भी कभी-कभी इस नस्लमे देखे जाते हैं।

माथा—आँखोके बीचमे चौड़ा और थोड़ा-सा उभरा हुआ।

चहरा और थूथन—चेहरा साधारणतया लम्बा और कनपटियोमे गड्ढे नहीं। नाकका बाँसा नथुनो तक सीधा। थूथन खूब विकसित, जिसमे काफी चौड़े नथुने और रगमे काली। जवडे जड़मे चौड़े और मजबूत और पुट्ठेदार।

आँखें—आँखे काफी बडी, शान्त और चमकदार। आकारमे लम्बोतरी।

ओंगोल-नस्लके साँडका सिर

बिन्नियाँ काली और आँखोंके चारों ओर चौथाईसे आधी इचकी चौड़ाईका घेरा ।

कान—साधारणतया बड़े और कुछ झुके ओर कानोंके भीतर बढ़िया मुलायम बाल ।
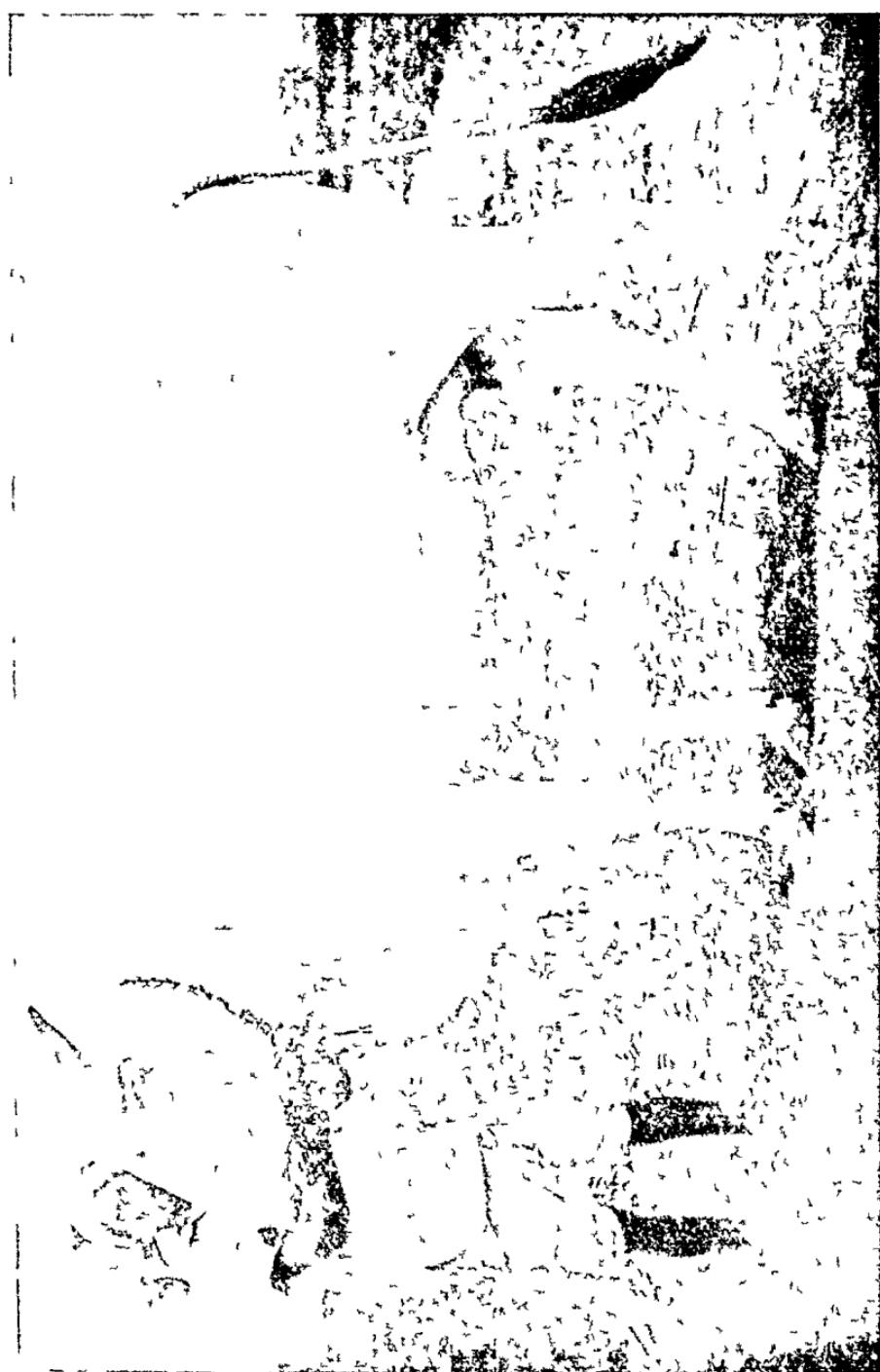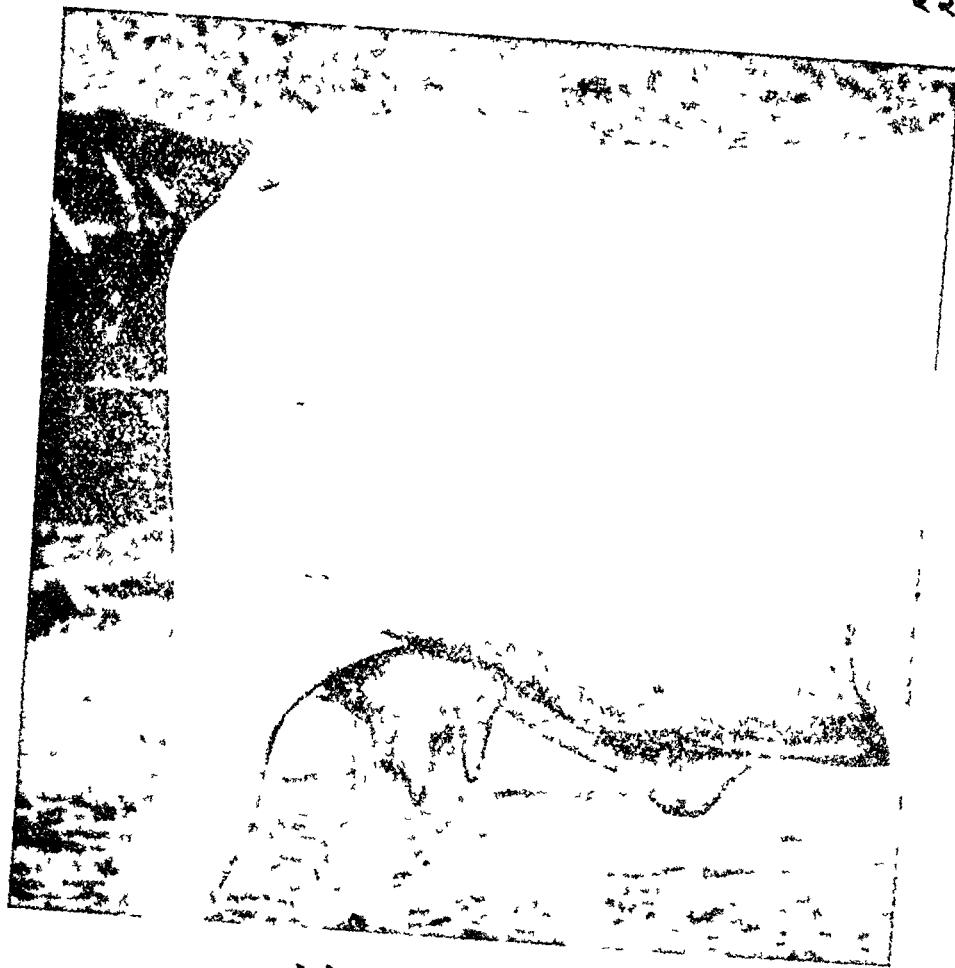
ओंगोल-नस्लकी गायका ऐन

सींग—छोटे और ठूँठ-से, वाहरको निकलते हुए और फिर पीछेको। जड़में मोटे, मजबूत और विना किसी फटनके।

गर्दन—नरकी गर्दन छोटी और मोटी तथा मादाकी साधारणतया लम्बी, सिरके जुड़ावपर साफ, सुन्दर और कन्धोंसे खूब सटी हुई।

ढाटा—खूब विकसित और सीधा। दोनों ओरसे भरा हुआ, न तो खाली और न किसी ओरको झुका हुआ।
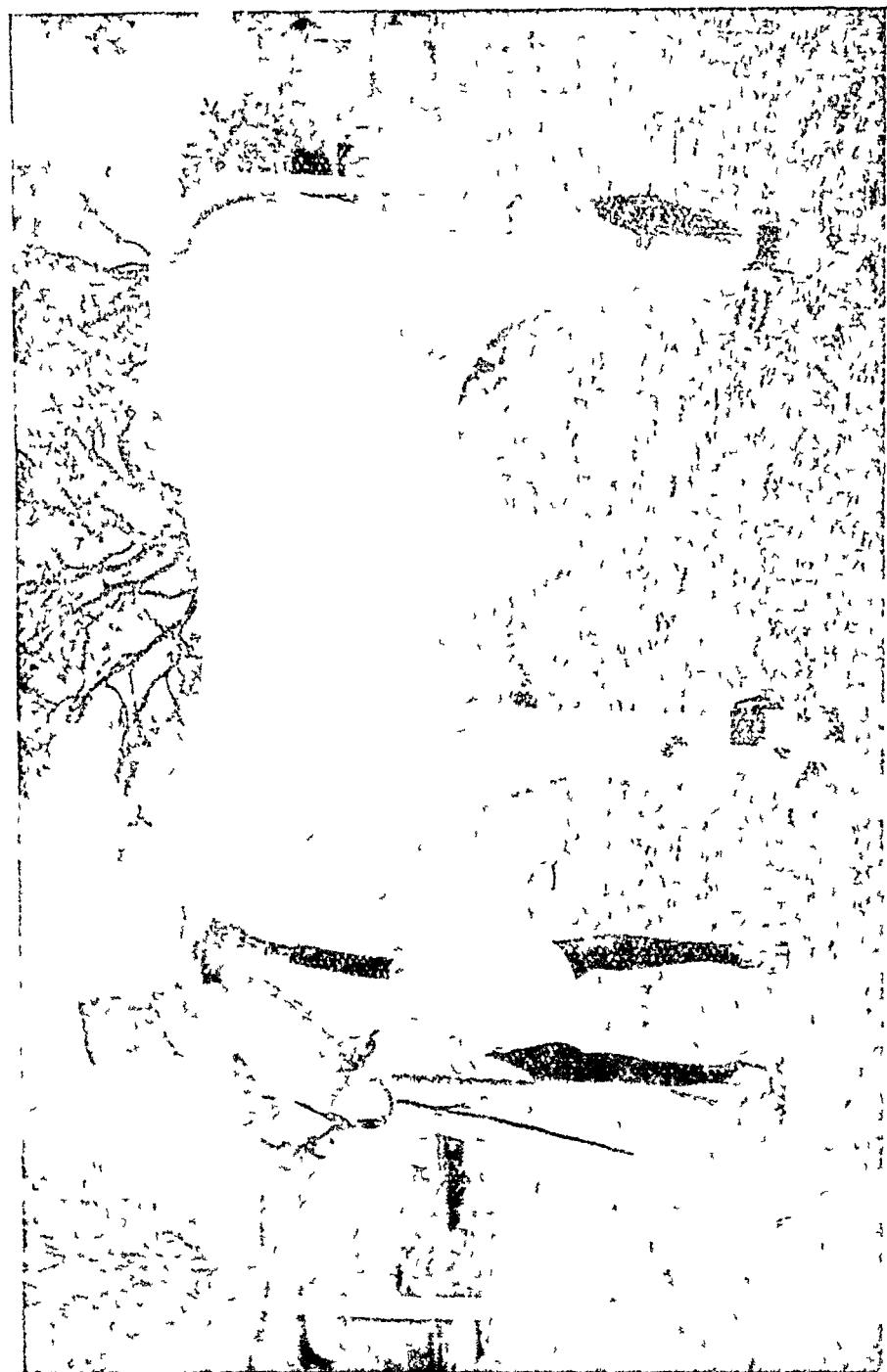
सासना—मोटा और तहोंमें लटकता हुआ और अगली टाँगोंके बीच तक मुतानकी झालरसे मिला हुआ। मादाके सासनेकी तहोंमें बढ़िया मुलायम बाल।

छाती—चौड़ी और भरी हुई।

टाँगे और कन्धे—टाँगें मजबूत और साफ। दरम्यानी लम्बी। काफी दूर-दूरपर और शरीरके नीचे वर्ग-सा बनाती हुई। छोटी खुरियाँ नुकीली और सीधी।

कन्धे लम्बे, ढलवाँ और सुतवाँ और शरीरसे सफाईसे सटे हुए, बगले चौड़ी और भरी हुई।

धड़—लम्बा और गहरा, जिसमें बढ़िया महराबदार पसलियाँ।

पीठ—कुछ लम्बी, चौड़ी और पुट्ठोंपर कुछ ऊँची। पीछे देखनेसे पुट्ठे ढलवाँ न दिखाई पड़े, वरन लगभग एक ही धरातलमें और पुट्ठेसे पूँछकी ओर ढलाव स्पष्ट दिखाई पड़नेवाला नहीं होना चाहिए।

पसलियाँ—लम्बी और बढ़िया महराबनुमा।

मुतान—गायोंका मुतान स्पष्ट और साधारण।

पिछाई

कमर और कूल्हा—कमर चौड़ी और मजबूत तथा कूल्होंकी ओरको झुकी हुई।

बगलें—भरी हुई।

जाघें—जाँघे खूब विकसित और भरी हुई। पीछेकी ओरको सीधी और पुट्ठेदार।
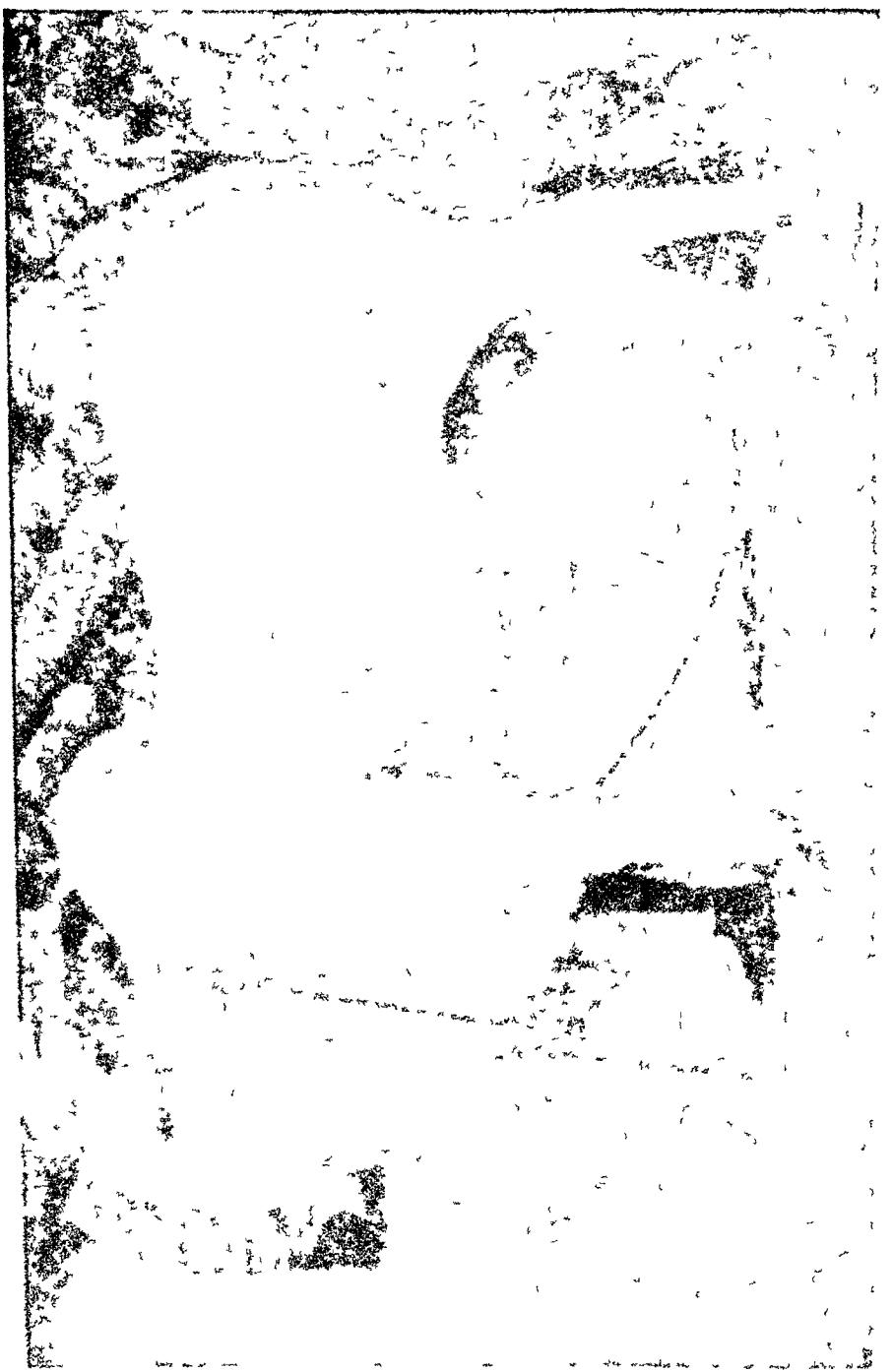
आंगोल-नस्लका बैल

पूँछ—पूँछ लम्बोतरी, भोंडी नहीं, लम्बी, बढ़िया और झौरी काली। पूँछकी हड्डी खौंचसे कुछ नीचे तक पहुँचती है।

खौंच, टाँगें और खुर—खौंच साफ और खुरके ऊपरका भाग ढलवाँ। पैर लगभग गोलाकार, खुर काले और उनकी फटान संकीर्ण।

ऐन, थन और दूधकी नसें

ऐन चौड़ा और आगेको काफी फैला हुआ और पिछली टाँगोंके बीचमें ऊपरको मुलायम और उसपर पतली चमड़ी। थन औसत दर्जेके और समरूपसे ऐनमें लगे हुए।

ऐनमें छोटी दूधकी नसें।

चमड़ी और बाल—चमड़ी दरम्यानी मुटाईकी, लचीली और उसपर काले धब्बे-से। बाल सुन्दर और सफेद।

दोष

नीचे लिखे चिह्न इस नस्लके दोष हैं—(१) लाल रंग और लाल रंगके चकत्ते, (२) सफेद झौरी, (३) सफेद बिन्नियाँ, (४) थूथन मांसके रंगकी, (५) खुर हल्के रंगके, (६) पिछाड़ीपर गहरे भूरे चिह्न और (७) शरीर चितकबरा।

नोट—चित्र-परिचय इस प्रकार है :—

पृष्ठ ९२ ओंगोल-नस्लकी गाय।

पृष्ठ ९४ ओंगोल-नस्लका साँड़।

पृष्ठ ९५ ओंगोल-नस्लकी ओसर।

लाल सिन्धी नस्ल

जैसा नामसे प्रकट है, लाल सिन्धी गायका असली स्थान सिन्धका सूबा है। गायोंकी यह एक प्रसिद्ध नस्ल है। इस नस्लकी विशुद्धताका एक कारण तो यह है कि सिन्ध एक प्रकारसे देशके अन्य सूबोंसे कटा हुआ-सा है, इसलिए वहांपर इस नस्लकी देखभाल शताब्दियोंसे हो रही है। दूसरा कारण वहांके समझदार गो-पालक हैं, जो विशेषतया मुसलमान हैं। बहुत लोगोंका भ्रम है कि इस नस्लका असली घर कराची और हैदराबाद है। यद्यपि अच्छी दुधार गायें बहुत बड़ी संख्यामें कराची और हैदराबादके पास और सिन्धु नदीके पश्चिमी किनारेके एक भागमें पाई जाती हैं, तो भी कराची और हैदराबादके उत्तर-पश्चिम और उत्तरके जिलोंसे इस नस्लका मुख्य स्थान सिन्धका इलाका कोहिस्तान है, जहांपर इस नस्लका पालन होता है। वहींपर यह नस्ल सिन्धकी लासबेला जातकी गायमें शामिल हो जाती है। साधारणतया सिन्धी नस्ल सिन्ध सूबेके पश्चिमी भागमें सीमित है, जहाँपर इस नस्लके विशुद्ध जानवर पाये जाते हैं और बिना किसी कठिनाईके बहुत-सी दुधार गायें वहाँ मिल जाती हैं। चूँकि गोचरभूमिकी तलाशमें गो-पालक अपने ढोरोंके साथ एक स्थानसे दूसरे स्थानको जाया करते हैं, इसलिए सूबेके एक बड़े भागमें इस नस्लके जनवर फैले हुए हैं और सूबेकी सीमापर दोगली नस्लके जानवर पाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि सिन्धके भूरे चितकबरे जानवरोंसे उनका संयोग हो जाता है।

लाल सिन्धी नस्ल

इस नस्लकी एक खूबी यह है कि वह देशके भिन्न-भिन्न जलवायुके स्थानोंमे भी पनप सकती है। बीमारियोंसे मुकाबिला करनेकी उसमे क्षमता है। इसी कारण इस नस्लके जानवर भारतवर्षके अन्य भागोंमें स्थानीय नस्लको ठीक करनेके लिए भेजे जाते है। ससारके भिन्न-भिन्न देशोंको—जैसे कोरिया, मलाया रियासतें, ब्रेजिल आदि देशोंको—इस नस्लके जानवरोंका निर्यात होता है। वहांपर यह नस्ल विशुद्ध रूपमे पाली जा रही है। सरकारी शालाओं, देशी रियासतों और अन्य व्यक्तियों द्वारा इस नस्लके झुड पाले जाते है।

सिन्धी गायें बड़ी दुधार होती है और भारतवर्षकी गायोंकी नस्लोंमे कदाचित सबसे सस्ती—दूध देनेमे सबसे कम खर्च करानेवाली है। १२ हजार पौंडका लेखा प्रति ब्यांतका मिलता है—एक ब्यांत ३०० दिनोंसे कुछ अधिकका। लेकिन एक अच्छे झुडका खयाल किया जाय, तो औसतन ३ हजार ८ सौ पौंडका लेखा मिलता है। अपने इलाकेमे सिन्धी गायका पालन बहुत सस्ता पड़ता है। गाय बहुत दूध देनेवाली होती है। बैल बोझा ढोने और खेतीका काम करते है।

सिन्धी बैल मझोले आकारका गठा हुआ जानवर होता है, जिसके रग-पुट्ठे अच्छे होते हैं। वह मध्यम गतिसे देर तक काम करनेवाला होता है और अपने आकारके हिसाबसे खेती करने तथा बोझा ढोनेके लिए बहुत उपयोगी।

विशेषताएँ

गहरा लाल रग ही इसका ठीक रग है, पर धुँधले पीले रगसे लगाकर भूरे रग तकके जानवर इस नस्लके पाये जाते है। गायकी अपेक्षा सांडका
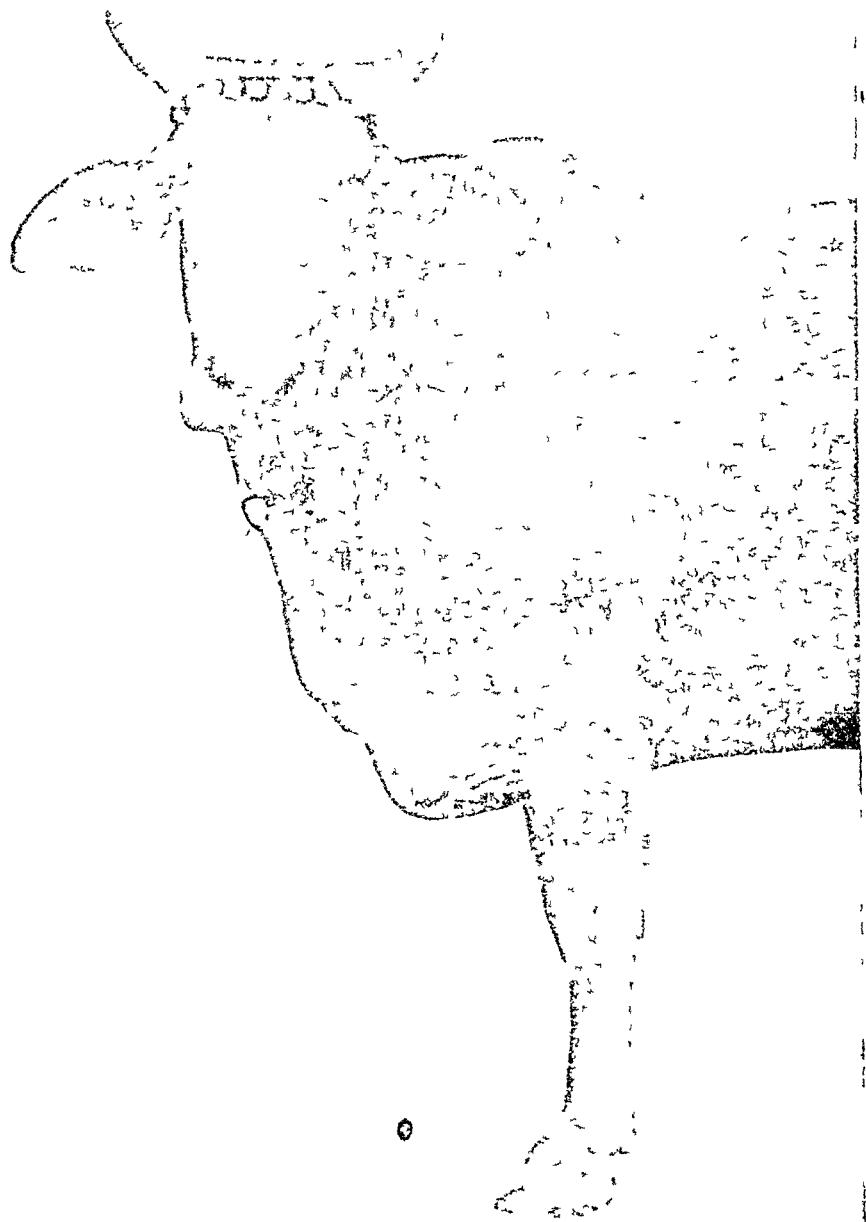
रग अधिक गहरा लाल होता है, और जव वह पूरा जवान होता है, तव तो उसके शरीरके छोर लगभग काले होते है। माथेपर सफेद टिकुली, सासनेके किनारे और धडके नीचे सफेदीका छिडकाव बुरा नहीं समझा जाता; पर सफेद या भूरे रगके चकते या बुन्दके दोगली नस्लके द्योतक हैं।

सिन्धी जानवर—नर और मादा दोनों—मझोले आकारके होते हैं और बनावटमे गठीले। मादाका वजन औसतन ७५० पौण्ड होता है और नरका ९२५ पौण्ड।

सिर

सिर साधारण आकारका होता है। शरीरका ढाँचा स्पष्ट, जिससे यह भावना होती है कि शताब्दियोसे उसकी नस्लकी देख-भाल होती रही है। आकृतिसे साँड़ पुष्ट प्रतीत होता है।

माथा—आँखोके बीच चौडा और चपटा या तनिक बाहरको निकला हुआ, जिसमे छोटे बाल और गुद्दी तनिक बीचमे उभरी हुई।

चहरा और थूथन—चहरा दरम्यानी लम्बा और स्पष्ट धीरे-धीरे गाओदुम होता हुआ वर्गाकार। पूर्ण विकसित काली थूथनमें परिवर्तित, जिसमे चौडे नथुने और पुष्ट होठ।

आँखें—काफी वडी, स्पष्ट और दूर-दूर करीनेसे लगी हुई। भौएँ पतली।

कान—मझोले आकारके, सुन्दर, साफ और चौकन्ने, आमतौरसे कानोंके भीतरकी खाल मक्खनकी पिलाईके रगकी और किनारेपर धुँधली-सी झालर।

सींग—साधारणतया सींग छोटे और मोटे होते है। गुद्दीकी वगलसे

सिन्धी गाय

निकलते हैं और ऊपरको मुड़ते है, आगेको और भीतरकी ओर सींगोंके सिरे कुन्द और दूर-दूर होते है।

अगाई

अगाई भरी हुई और आकृतिमे भोंडी न होते हुए खुरदरी-सी।

गर्दन—साधारणतया छोटी और सिरके मिलानके पास काफी मोटी, पर सिरसे समरूपसे मिली हुई।

सासना—नर और मादाके बहुत काफी, पर पतला और सुन्दर तहोंमे लटकता हुआ ओर छूनेमे बहुत कोमल। जबड़े मजबूत और सासना नीचेके जबडे तक फैला हुआ।

छाती—चौड़ी और भरी हुई।

टाँगे और कधे—टाँगें सीधी, मझोले आकारकी, लेकिन मजबूत, जिनकी हड्डियाँ साफ और सुन्दर। घुटने चपटे, पर मजबूत। कन्धे बहुत भारी नहीं, पर शरीरमे मजेसे मिले हुए। ढाटा मझोला, लेकिन साँडके अच्छी तरह विकसित, धीरे-धीरे आगेको झुकता हुआ और गर्दनपर एकदम गिरता हुआ। खुरके ऊपरका भाग उभरा हुआ। खुर मझोले आकारके, काले, काफी कडे, थोडे-से नुकीले आगेको और खूब गठे हुए।

धड़

लम्बा, भरा हुआ और गोल और सानुपात।

पीठ—सीधी, मजबूत और रीढकी बनत साफ दिखाई देती हुई और कमरपर चौड़ी।

लाल सिन्धी नस्ल

पसलियाँ—लम्बी और चौडी, दूर-दूर फैली हुई। बड़ा और भरा हुआ पेट।

मुतान—साधारण आकारका, पतला और स्पष्ट। नरका मुतान लटकता हुआ और प्रारम्भिक थन स्पष्ट।

पिछाई

बहुत दुधार गायोकी अपेक्षाकृत तग।

कमर और पेड़ू—कमर काफी चौड़ी और पेड़ू गोलाकार-सा।

कूल्हे और कूल्हेकी हड्डियाँ—कूल्हा दरम्यानी लम्बा और धीरे-धीरे ढलवाँ। हड्डियाँ चौडी और ऊँची।

बगलें—भरी हुई और भारी नहीं।

जाँघे और नितम्ब—जाँघें काफी दूरीसे, जिससे ऐनको काफी स्थान रहता है। नितम्ब चौडे और कुछ गोलाई लिए हुए।

पूँछ—पतली, अच्छी तरह जमी हुई, जिसमे अच्छा काला झौरा।

टाँगें, खौच और खुर—टागे शरीरके आकारके अनुपातमे और बढिया, काफी दूर और खुर अच्छे। हड्डियाँ अच्छी और जोड स्पष्ट। खौच मजबूत और उभरे हुए खुर दरम्यानी आकारके आगेको कुछ सुतवाँ और अधिक फैले हुए नहीं।

ऐन, थन और दूधकी नसे

ऐन—बडे आकारका, लम्बा, चौड़ा, भरा हुआ और कुछ लटकता-सा, पर शरीरसे खूब चिपटा हुआ, आगेको काफी फैला हुआ, पीछेको कम।

थन—थनोंकी लम्बाई और आकार सम, पर वर्गाकार नहीं ।

दूधकी नसें—खूब साफ, लचीली, बहुत-सी शाखाओंमे ।

चमडी और बाल

चमड़ी—खासी ढीली, छूनेमे मुलायम और नरम और बालोंके नीचे रग काला ।

बाल—छोटे और सम और छूनेमे लचीले ।

दोष

बडे-बडे सफेद चकते और लाल रगको छोड़कर और कोई पूरा रग ।

नोट—चित्र-परिचय इस प्रकार है :—

पृष्ठ १०१ सिन्धी गायका ऐन ।

पृष्ठ १०३ सिन्धी गायका सिर ।

पृष्ठ १०७ सिन्धी नस्लका सॉड ।

पृष्ठ १०९ सिन्धी नस्लके साँड़का सिर ।

पृष्ठ ११० सिन्धी नस्लका पट्ठा सॉड ।

पृष्ठ १११ सिन्धी नस्लकी ओसर ।

कँकरेज-नस्ल

इस नस्लका मूल स्थान कच्छकी रन-छोटी खाडीसे दक्षिण-पूर्वी प्रदेश है, जो सिन्धके थारपाकर जिलेके दक्षिणी-पश्चिमी कोनेसे दक्षिणमें अहमदाबाद ज़िलेके ढोलका स्थान, पूर्वमें दीसासे लगाकर पश्चिममें रधनपुरा रियासतके ठेट किनारे तक—विशेषकर सरस्वती और बनस नदियोंके किनारों तक—फैला हुआ है। इस इलाकेमें चारेके लिए ज्वार और बाजरा होते हैं। पीढियोंसे इस नस्लके जानवरोंको अहीर, जाट और रैबाड़ी लोग पालते आए हैं। असली नस्लके बहुत-से जानवर इस इलाकेमे पाए जाते हैं।

कँकरेज-नस्लके जानवरोका इलाका ऊँचा या पहाडी नहीं है, बल्कि समतल और नीची धरातलका है। कहीं-कहीं तो इस इलाकेकी धरातल समुद्र-तटसे भी नीची है। यहाँ जमीन मटियार है और दक्षिण-पश्चिममें गहरी काली मिट्टी है। यहाँपर औसतन २० से लगाकर २६ इंच तक साल भरमें मेंह बरसता है और तापमान ४० डिग्री फैरनहीटसे लगाकर १२२ डिग्री फैरनहीट तक होता है।

इस इलाकेमें "जिनृजिवो" नामकी घास बहुत होती है। इस इलाकेके उत्तरी भागमे गोचरभूमि बहुत है। बछड़े जब पाँच महीनेके होते हैं, तब उनका दूध पीना बन्द कर दिया जाता है और बधिया करके उन्हें बेच दिया जाता है। पेशवर बधिया करनेवाला आदमी बछड़ोंको बधिया करता है।

बम्बई-सरकार द्वारा अहमदाबादके करीब छरोदी-कृषि-फार्ममें कँकरेज-

नस्लके जानवर पाले जाते हैं और देहातके कॅंकरेज-नस्लके असली जानवरोंका लेखा रजिस्टरमें रहता है। माल ढोनेके लिए कॅंकरेज-नस्लके बैलोंकी बहुत मॉंग रहती है। सूरत, काठियावाड़ और बड़ौदाकी रियासतोंमें कॅंकरेज-नस्लके बैल खेती और बोझ ढोनेके काम बहुत आते हैं। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिकामें इस नस्लके जानवर पहले बहुत भेजे जाते थे। इस नस्लकी गाएँ दूध भी काफी देती हैं। छरोदी-कृषिशालामें इस नस्लकी ११० गायें हैं। उनका दूध प्रति गाय औसतन २४१८ पौण्ड फी ब्यॉंत है। वैसे कोई-कोई गाय एक ब्यॉंतमें ७२६९ पोण्ड तक देती है।

विशेषताएँ

भारतीय गो-वंशकी भारी नस्लोंमें से कॅंकरेज-नस्ल है। दूध देनेवाली गायका वज़न ८०० पौण्डसे लगाकर १००० पौण्ड तक होता है और सॉंडका १००० पौण्डसे १५०० पौण्ड तक। तुलनात्मक दृष्टिसे इसका माथा चौड़ा होता है और बीचमें तनिक धसा हुआ। सींग मुड़े हुए और मजबूत। सींगोंपर और नस्लके जानवरोंकी अपेक्षा अधिक ऊँचाई तक खाल रहती है। चौड़ी छाती, बलशाली शरीर और सीधी पीठ, खूब विकसित ढाटा, मुतान लटकता हुआ। साधारणत लम्बी पूँछ, जिसकी काली झौंरी और खोंचसे नीचे तक पहुँचती हुई।

कॅंकरेज-नस्लकी चाल भी विचित्र है। टॉंगोंको छोड़कर शरीरके अन्य किसी भागकी गति नहीं होती। चाल नम्र है। चलनेमें कॅंकरेज-नस्लके जानवर सिर ऊपर उठाकर चलते हैं। कदम लम्बे और सम पड़ते हैं। पिछला खुर अगले खुरके चिह्नसे आगे पड़ता है। इस प्रकार इस नस्लकी चाल सवाई है।

नरका रंग रुपहला भूरा, लोहिया भूरा या काला होता है। अगाई, ढाटा और पिछाई धड़की अपेक्षा अधिक गहरे रंगके होते हैं। अगली-पिछली टाँगोंमे काले चिह्न होते है। खुरोंका ऊपरी भाग काला। नरकी अपेक्षा मादामे रंगके चिह्न हल्के। इस नस्लमे लाल रंग अच्छा नहीं माना जाता। नवजात बच्चोंकी गुद्दी लाली लिए होती है और छैसे नौ महीनोंके भीतर यह रंग चला जाता है।

सिर

माथा—चौड़ा और धसा हुआ। पेशानीकी हड्डी धसी हुई। उभरा हुआ माथा ठीक नही होता।

चेहरा और थूथन—चेहरा छोटा, नाकका बाँसा सीधा और धसा हुआ। नाकके पास चेहरा कुछ उठा हुआ। रोमन नाक इस नस्लका एक ऐब है।*

आँखें—आँखे साफ, स्पष्ट, बडी, चौकन्नी, चमकदार, फैली हुई और पलकोंके ऊपर पुट्ठेदार तह। आँखोंके चारों ओर काला रंग पसन्द किया जाता है और आँखोंके ऊपर तो काले रंगका होना जरुरी है।

कान—कान लम्बे, ढीले ढंगसे लटकते हुए और प्राय नाकके किनारे तक पहुँचनेवाले अधिक लम्बे कान, जो मुँहके नीचे मिल जायँ और भी अच्छे माने जाते है। कानोंके भीतर चमड़ी लाल या भूरी और काले चिह्नोंसे युक्त होती है।

सींग—सींग मोटे होते हैं, जो तनिक बाहरको बढ़ते हैं और तब

* जमनापारी बकरीकी रोमन नाक होती है। —ले०
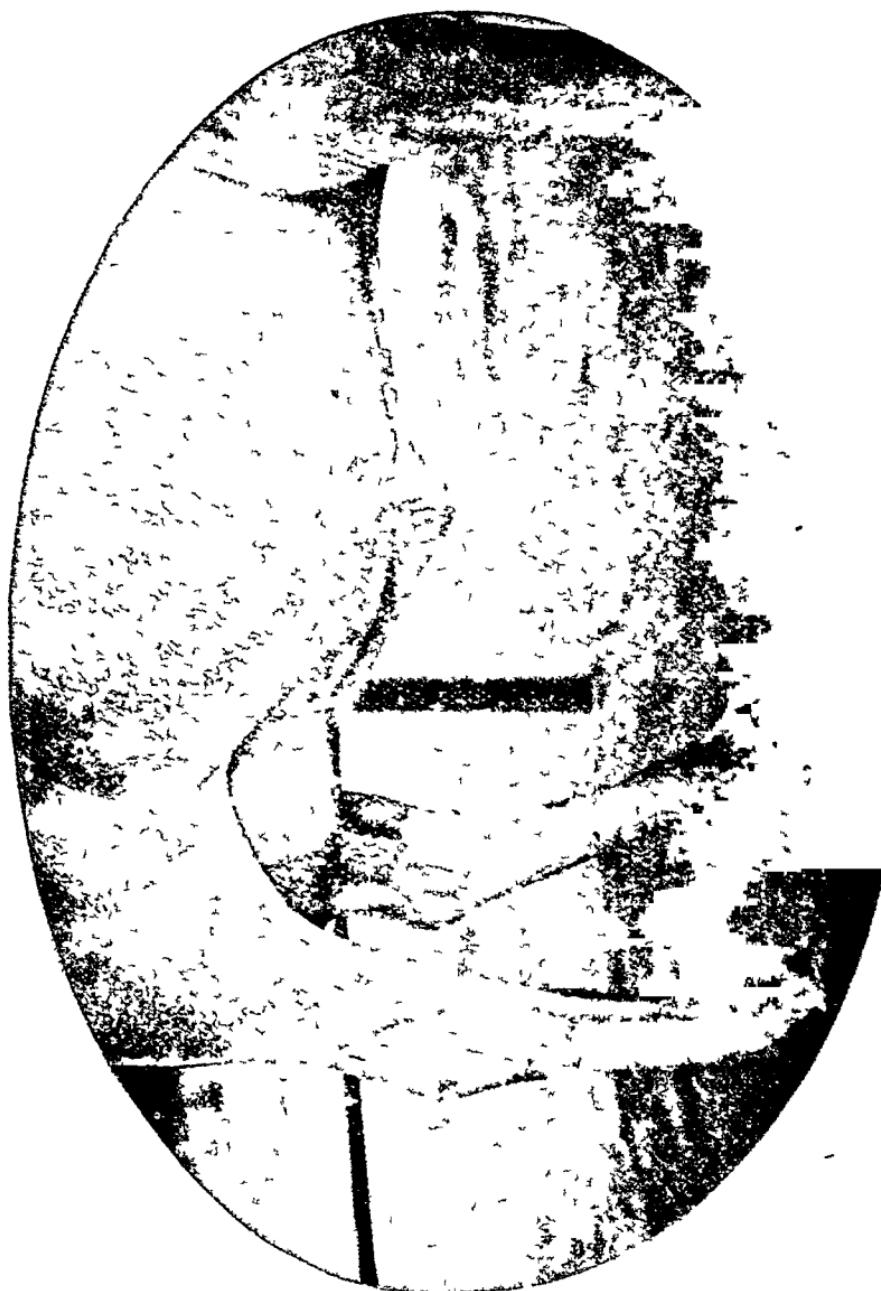
कॅंकरेज-नस्लकी गायका ऐन

कँकरेज-नस्लकी गायका सिर

ऊपरको और फिर तनिक भीतरको शरीरकी ओर। उसके बाद सींगोंके सिरे आगेको झुक जाते हैं। सींग इस प्रकार नुकीले होते हैं; पर लोग उन्हें भोथरे कर देते हैं या ऊपरसे तनिक काट भी देते हैं।

शरीर और पसलियाँ

गर्दन—लम्बी, पतली, स्वस्थ और शरीरसे सटी हुई। सिरसे हटके
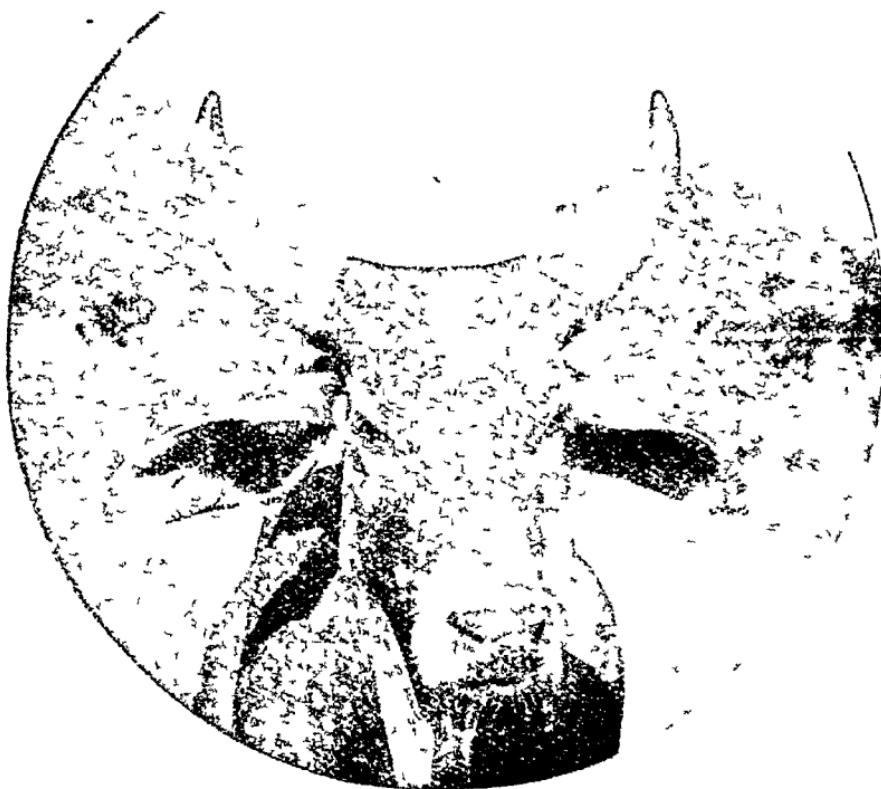
कॅकरेज-नस्लके साँड़का सिर

गर्दनमे ऊपरको एक झुकाव होता है, जिससे गर्दन महराबदार-सी हो जाती है।

सासना—पतला लटकनेवाला सासना अच्छा माना जाता है।

छाती—चौड़ी और खूब पुट्ठेदार।

ढाटा (कोहान)—बडा और स्पष्ट, कभी-कभी झुका-सा , पर झुका ढाटा पसन्द नहीं किया जाता। हाँ, बाईं ओरको झुका ढाटा बहुत ही अच्छा;

माना जाता है, पर बाईं ओरको झुका ढाटा शायद ही कहीं देखनेको मिले।

कन्धे, टाँगें और खुर—कन्धे चौड़े, ढलवाँ और खूब विकसित होते हैं। टाँगे भी खूब गठी हुई होती हैं। अगली टाँगें सीधी होती हैं और खुर और टखनेका भाग सीधा और लम्बा होता है। खुर काले, मजबूत और गठे हुए होते हैं—फैले हुए नहीं।

धड़

धड़ सीधा, बड़ा, भारी और सुडौल होता है।

पीठ—पीठ सीधी होती है।

पसलियाँ—लम्बी, खूब फैली हुई और दूर-दूर।

मुतान—मादाके बहुत स्पष्ट, नरके दरम्यानी और लटकता हुआ।

पिछाई

विकसित और पुट्ठेदार, लम्बी और भरी हुई।

कमर और कूल्हे—कमर चौड़ी, कुशादा और तनिक ढलवाँ। कूल्हे स्पष्ट और कुशादा।

बगलें—चौड़ी और भरी हुई जाँघे और नितम्ब। जाँघें कुशादा और भरी हुई। नितम्ब पुट्ठेदार।

पूँछ—पूँछ शरीरसे खूब सटी हुई, झुकी हुई नहीं, मझोला होती है और जमीनको नहीं छूती। पूँछमें घनी और काली झौरी होती है। सफेद झौरी कोई पसन्द नहीं करता।

ऐन, थन और थनकी नसे

ऐन अच्छे आकारका, बेडौल नहीं। वह पीछेकी अपेक्षा आगेकी ओर अधिक रहता है। अगले थन पिछले थनोंसे कुछ बड़े होते हैं।

चमड़ी और बाल

चमड़ी मुलायम होती है, जिसपर बढिया चिकने बाल होते हैं।

स्वभाव

तेज़, मजबूत और अजनबियोंसे उत्तेजित होनेवाला।

नोट—चित्र-परिचय इस प्रकार है :—

पृष्ठ ११४ कॅकरेज-नस्लका बैल।

पृष्ठ ११५ कॅकरेज-नस्लकी गाय।

पृष्ठ ११७ कॅकरेज-नस्लकी ओसर।

पृष्ठ ११९ कॅकरेज-नस्लका पट्ठा साँड़।

पृष्ठ १२३ कॅकरेज-नस्लका बैल।

हमारी अन्य गायें

हल्लीकर-नस्ल

मैसूर राज्यके मैसूर, हस्सन और तमकूर इलाकोंमे यह नस्ल खास तौरसे पाली जाती है ; पर वैसे मैसूर राज्य भरमें इस नस्लके जानवर पाए जाते है। बोझा ढोनेके लिए इस नस्लके वैल वहुत वढिया होते हैं, पर गायें दुधार नहीं होतीं। इस नस्लके सींग और सिर अपनी खास विशेपता रखते है। सिर स्पष्ट, वीचमे सलवटे-सी, लम्बा चेहरा और थूथनकी ओर गाओदुम। गुद्दीके ऊपर एक दूसरेके करीवसे सींग निकलते हैं, वढिया झुकावमे पीछेकी ओर जाते है और गर्दनकी दोनों ओर तव थोड़े-से ऊपरको झुककर सिरोंमे नुकीले हो जाते हैं। मैसूर-सरकारका अमृतमहल-विभागने इस नस्लकी एक किस्म तैयार की है, जो हिन्दुस्तान भरमे काम करनेके लिए प्रसिद्ध है।

अमृतमहल-नस्ल

हिन्दुस्तानकी वोझ ढोनेवाली प्रसिद्ध नस्लोमे से यह नस्ल है। इसका असली स्थान मैसूर रियासत है, जहाँपर हिन्दुस्तानमें अगरेजोके आनेसे पहलेसे इस नस्लका पालन होता है। हैदर अलीके वारवरदारीका सामान और सैनिक सामान ढोनेका काम इस नस्लके वैलोसे लिया जाता था।

इस नस्लके जानवर वड़े नहीं होते, पर वे वड़े ही गुस्सैल, तेज़ और जीवटदार होते है। मैसूरमे और मैसूरके आसपासके इलाकोमे अमृतमहल-नस्लके जानवरोकी वड़ी माँग रहती है।

मेवाती-नस्ल

अलवर रियासतके पूर्वी भाग और भरतपुरके पश्चिमी भागमें मेवाती-नस्लके जानवर बड़ी सख्यामें पाले जाते हैं। वे बहुत सीधे, शक्तिशाली और गहरी जुताई और गाड़ीके कामके लिए प्रसिद्ध हैं। हरियाना-नस्लसे उनका सम्बन्ध है, पर उनमें गीर-नस्लके खूनके मिलानका प्रमाण भी है।

साधारणतया उनका रंग सफेद होता है और सिर, गर्दन, कन्धे और अगाई-पिछाईपर धुँधला रग होता है। हरियाना-नस्लकी भाँति टाँगे उनकी कुछ ऊँची होती हैं, पर कुछ ढीले ढगकी बनी होती हैं। सिरका उठान कुछ ऊँचा होता है। गाये खासी दुधार होती हैं।

नागौरी-नस्ल

भारतकी अति प्रसिद्ध नस्लोंमें से नागौरी-नस्ल है, और सवारीके कामके लिए बहुत अच्छी और तेज। जोधपुर रियासतके उत्तर-पूर्वमें इस नस्लका असली स्थान है, जहांपर उस सूखे इलाकेके काश्तकार इस नस्लका पालन-पोषण करके अपनी जीविका चलाते हैं। बैल काफी बड़े होते हैं। दुल्की चाल और तेज चलनेके लिए वे बहुत प्रसिद्ध हैं। पर्वतसर-मेलेमें प्रतिवर्ष बड़ी सख्यामे नागौरी जानवर बेचे जाते हैं। उनका रग सफेद और भूरा-सफेद होता है। गाये दुधार नहीं होती।

नीमारी-नस्ल

नर्मदा नदीकी घाटीमे इस नस्लके जानवर बडी सख्यामें पाले जाते हैं। वे तेज काम करनेवाले जानवर हैं। उनकी बड़ी माँग रहती है। मालूम ऐसा होता है कि उनमे गीर-नस्लका खून है, इसलिए कुछ गायें दुधार होती हैं।

सिर साधारणतया लम्बा होता है और कुछ उभरा हुआ। सींग गुद्दीसे प्राय. पीछेकी ओरको निकले होते है और ऊपरको और बाहरको होकर पीछेकी ओरको नुकीले हो जाते हैं।

साधारणतया रग उनका लाल होता है और शरीरके अनेक भागोंपर सफेद चिह्न होते हैं।

राठ-नस्ल

अलवर राज्यके पश्चिम और उत्तरमे और करीबके इलाकोंमे, जिसमें राजपूतानेकी दूसरी रियासतोंके भाग शामिल हैं और जो उस इलाकेसे उत्तर-पश्चिमको है, इस नस्लके जानवर पाले जाते हैं। वे दरम्यानी आकारके होते है, साथ ही शक्तिशाली और बढ़िया जानवर। अच्छी गठन और तेज़ीके लिए वे प्रसिद्ध है। इस नस्लके इलाकेमे सूखा होती है, जहाँपर कुँएकी सिचाईसे खेती होती है और जहाँ गोचरभूमि सीमित है। इसलिए जानवर अन्नकी फसलकी वचत-खुचत और खास तौरसे तैयार किये हुए चारेकी फसलपर पाले जाते है।

राठ-नस्लके जानवरोकी विशेषताएँ मूलत हरियानेकी-सी है। बस, राठ-नस्ल कुछ छोटी होती है। वैल खेती और बोझा ढोनेके कामके लिए खूब अच्छे होते हैं और गाये खासी दुधार होती हैं। उनका पालना सस्ता है और यह नस्ल ग़रीब आदमीकी नस्ल कही जाती है।

थारपारकर-नस्ल

दाक्षीणी-पश्चिमी सिन्धीकी सूखी और अर्ध-मरुभूमि (नीम रेगिस्तान) के इलाकेमें यह नस्ल पाई जाती है। पासकी कच्छ, जोधपुर और

जैसलमेर रियासतोंमें भी यह नस्ल पाई जाती है। इस इलाकेमें मेंह कम बरसता है और बालूके टीले होते हैं। जानवरोंको इसलिए रेगिस्तानकी चराई और झाड़ियोंपर गुजारा करना पड़ता है। अन्नकी फसलकी बचत-खुचतसे वे सूखाके दिनोंमे अपनी गुज़र करते हैं।

इस नस्लके जानवर दरम्यानी कदके होते हैं और गाये खासी दुधार होती हैं। बैल बहुत काम करनेवाले होते हैं। रेगिस्तानमें पले जानवर जीवटदार और पालनेमे सस्ते होते हैं।

दिउनी-नस्ल

निजाम हैदराबादकी रियासतके पश्चिमी और उत्तरी-पश्चिमी इलाकोंमें यह नस्ल पाई जाती है। दरम्यानी आकारकी यह नस्ल बड़ी मूल्यवान है, खेतीके लिए इस नस्लके बैल बहुत अच्छे होते हैं। निजामकी रियासतमें पाई जानेवाली गायोंकी अन्य नस्लोंकी अपेक्षा इस नस्लकी गाये काफी दूध देती हैं।

यो तो इस नस्लका रग कई प्रकारका होता है, पर काले और सफेद या लाल और सफेद रग प्रायः पाये जाते है—चकते और धब्बे-से सारे शरीरपर होते हैं। माथा इस नस्लका बडा होता है। चेहरा पतला और कान कुछ लम्बे और कुछ लटकते हुए और सामनेसे उनका भीतरी भाग दिखाई पड़ता है। ऐन अच्छे आकारका गठा हुआ होता है और थन मामूली आकारके और ऐनमे अच्छी तरह लगे हुए।

धन्नी-नस्ल

सीमान्त-प्रदेशमे और पजाबके झेलम, रावलपिंडी और अटकके

इलाकोंमे इस नस्लके जानवर काफी सख्यामे पाले जाते है। इन इलाकोंमें मेह बहुत कम बरसता है, इसलिए जानवरोंका पालन-पोषण अन्नकी बचत-खुचत और खास तौरसे तैयार किये गए चारेपर होता है। इस नस्लके जानवर बडे नहीं होते , पर वे बडे तेज और गठीले होते है। तेज जुताईके लिए इनकी बैलोंकी बडी माँग रहती है। हाँ, गायें इस नस्लकी दुधार नहीं होतीं।

सफेद रोंगटेपर लाल या काले धब्बे ही इस नस्लका रग है। वैसे लगभग सफेद रगके जानवर भी पाए जाते है, जिनपर टिपके रहते है। बहुत-से जानवरोंका रग काला या लाल होता है, जिसमे किन्हीं स्थानोंपर चकते दिखाई पड़ते है।

भगनेरी-नस्ल

सिन्धके लगे इलाको और बिलोचिस्तानके जाकोबाबादके उत्तरी इलाकेके भाग ही इस नस्लका घर है। यह इलाका वृक्षहीन है और यहाँ ऊँची-नीची जमीन भी है, जहाँपर बेहद गर्मी और बेहद ठड पड़ती है और जहाँपर नदीके बाढके पानीसे खेती होती है। सिचाई थोड़े ही समयमे सम्भव है, इसलिए पानीका उचित उपयोग करनेके लिए जमीनमे बाँध बाँध दिए जाते है। जानवरोंका पालन-पोषण बचे-खुचे अन्न और खास तौरसे तैयार की हुई चारेकी फसलपर होता है।

इस नस्लका रग सफेद या भूरा होता है, जो काले रगकी गहराई तक पहुँचता है—विशेषकर गर्दन, कन्धों और जवान नरोंके ढाटोपर। इस नस्लके जानवर कुछ लम्बे और सुडौल होते है, जिनकी पसली काफी महराबदार

और हड्डियाँ और पुट्ठे मजबूत होते हैं। गायें साधारणतया दुधार होती हैं और चुनी हुई गायें तो काफी दूध देती हैं।

यह नस्ल दज्जल जातकी एक शाखा है, जो पंजाबके डेरागाजीखाँके जिलेमें पाली जाती हैं।

गाउलाउ-नस्ल

मध्य-प्रदेशकी यह नस्ल सबसे महत्त्वपूर्ण है। वर्धा और छिन्दवाड़ा जिलोंमें इस नस्लके सबसे अच्छे जानवर पाये जाते हैं। गायें खासी दुधार होती हैं। अगर बैलोंको अच्छी तरह पाला जाय, तो वे बहुत अच्छे बैल बनते हैं। दरम्यानी ऊँचाईके जानवर इस नस्लके होते हैं; पर बनावटमें हल्के ढाचेमें पतले और शायद इसका कारण यह है कि बचपनमें उनकी देखभाल ठीक नही होती। कान दरम्यानी आकारके होते हैं, और उन्हें ऊँचा करके वे चलते हैं, जिससे उनकी सतर्कता प्रकट होती है। नरका सासना भारी होता है और मुतान कुछ लटकता-सा होता है।

गायें प्रायः सफेद होती हैं और नर सिर, गर्दन, ढाटे और पुट्ठोंपर भूरे होते हैं।

हिसार-हाँसी-नस्ल

जैसा नामसे प्रकट होता है, इस नस्लका असली स्थान हिसार जिलेमें हाँसीके आसपास है। उस ज़िलेमें इस नस्लके जानवर बड़ी सख्यामें पाये जाते हैं। करीबके इलाके गुड़गाँव और दिल्लीके जिलोंमें भी यह नस्ल पाई जाती है, जहाँ माल ढोनेके काममें इस नस्लके बैल बहुत काम आते हैं।

इस नस्लके जानवर हरियाना-नस्लके जानवरोके समान ही होते हैं , पर इस नस्लके जानवर उनकी अपेक्षा अधिक मजबूत और भारी होते हैं। अपेक्षागत उनके सींग मोटे, लम्बे और टेढे होते हैं। कान बडे और ढीले तौरसे लटकते हुए। भारी पैर और थोडा लटकता हुआ मुतान। इस नस्लके हरियाना-नस्लकी गुद्दीपर जो स्पष्ट उभार होता है, वह नहीं होता। इस नस्लके बैल माल ढोनेके काममे खास तौरसे आते हैं। गायें हरियानेकी गायोकी अपेक्षा कम दूध देती हैं। हरियाना-नस्लके समान इस नस्लका रग सफेद या हल्का भूरा होता है और सांड़ोकी गर्दन, सिर, कन्धे और पुट्ठे गहरे भूरे।

कंग्याम-नस्ल

कग्याम-नस्लके जानवर मदरास अहातेके कोयम्बटूरके दक्षिणी-पूर्वी और दक्षिणी ताल्लुकमे पाये जाते हैं। वे मझोले आकारके होते हैं , पर मजबूत, काममे तेज, पालनेमे सस्ते और दससे बारह वर्ष तक काम करते हैं। कग्याम उन गिनी-चुनी नस्लोंमे से है, जिसका पीढियोंसे वैज्ञानिक ढगसे पालन-पोषण किया गया है। गायें दुधार नहीं होतीं।

इस नस्लके बैल दक्षिणी भारत और सीलोनमे काममे लाये जाते है।

खिलारी-नस्ल

बम्बई-सूबेके दक्षिणी भागमे इस नस्लके जानवर पाये जाते हैं। शोलापुर और सताराके जिलोंमे विशेषकर इस नस्लका पालन होता है। यह नस्ल बोझा ढोने और खेतीके लिए अच्छी है। इस नस्लके जानवर बडे जीवटदार होते हैं और चारेकी कमीको सह लेते हैं। गायें दुधार नही होतीं।

लोहानी-नस्ल

विलोचिस्तानकी लोरालई एजेंसी और उत्तरी सीमान्त-प्रदेशके पश्चिमी जिलोंमें इस नस्लका असली घर है। पजावके देराइस्माईलखांके जिलेमें और भारतकी सीमासे लगे कवीलोंवालोंके इलाकेमे भी इस नस्लके जानवर खासी तादादमे पाये जाते हैं। अभी तक इस नस्लकी ठीक तौरसे जाँच नहीं हुई और प्रारम्भिक जांचसे मालूम होता है कि लोहानी-नस्लकी गायोंमे दूधके लिए सम्भावनाएं हैं। खेती-चारीके लिए पहाड़ी इलाकोंमें खेती और वोझ ढोनेके लिए इस नस्लके वैल अच्छे होंगे।

लोहानी-नस्लके जानवर भारतके पहाड़ी जानवरोंकी भांति छोटे होते हैं। इस नस्लका प्रसिद्ध रग लाल है, जिसमे सफेद चकते होते हैं—यद्यपि पूरे लाल रगके जानवर भी पाये जाते हैं।

इस नस्लकी गायें दस पौंड तक दूध प्रतिदिन देती कही जाती है।

मालवी-नस्ल

सैण्ट्रल इडिया एजेंसी (मध्य-भारत एजेंसी) के अपेक्षाकृत सूखे इलाकेमें इस नस्लके सबसे अच्छे जानवर पाये जाते हैं। वहांपर काफी गोचरभूमि है, जहां इस नस्लके जानवर बहुत पाये जाते हैं। अन्नकी फसलकी बचत-खुचत और खास तौरसे तैयार किये गये चारेपर ये जानवर पाले जाते हैं। मध्य-प्रदेशके उत्तरी भाग और निजाम सरकारके उत्तरी-पूर्वी टुकड़ेमें इस नस्लके जानवर पाले जाते हैं। दरम्यानी और हल्के बोझेके कामके लिए इस नस्लके बैल बहुत अच्छे होते हैं। गायें दुधार नहीं होतीं।

इस नस्लके जानवर गठीले और भारी बनावके होते हैं। उनका रंग भुरा होता है। जवान नरमें वह गहरे लोहिया भूरे रंगका रूप धारण कर लेता है और गर्दन, कन्धे, ढाटे और अगाई-पिछाईपर क़रीब-करीब काला हो जाता है, पर उमर पाकर गायें और बैल सफ़ेद हो जाते हैं।

गो-वंशकी उन्नति

हमारा देश कृषि-प्रधान है और देशकी लगभग ९० फी-सदी जनसंख्याका निर्वाह खेती अथवा खेतीसे सम्बन्धित पेशोंसे होता है। खेतीके लिए हमे बैलोंकी जरूरत है, और किसानकी सबसे बड़ी पूँजी बैल है। बिना अच्छी गायोंके अच्छे बैल हो नही सकते। देशकी भयकर गरीबीके कारण हिन्दुस्तानी किसान बढिया बैल खरीद नही सकता। फलस्वरूप उसकी खेती बिगडती जा रही है, इसलिए गरीबकी वैतरणी पार करनेके लिए हिन्दुस्तानी किसानोंको गायकी पूँछ पकडनी चाहिए। बिना ऐसा किए, उसका गुजारा नही।

यदि हम अपने देशके वर्तमान गो-धनकी तुलना देशके पूर्वकालीन गो-धनसे करें, तो हमें अपनी नासमझी, बेबसी और क्रियात्मक कल्पनाशक्तिपर लज्जा आयगी। मौर्य-वशके राज्यकालमे देशके कुछ नगरोंमे एक-एक लाख गायोंकी गोशालाएँ थीं। आजकलकी-सी गोशालाएँ नहीं, जो आर्थिक और नैतिक दृष्टिसे कौड़ी कामकी नहीं। आर्थिक गोशाला कही जानेवाली गोशाला तो देशके लिए भार और कलंक-स्वरूप हैं। वहाँपर तो बूढी, टेढी, लगड़ी, लूली गायें अपने आखिरी दिन बिताने भेजी जाती हैं। नस्लको खराब करनेके लिए उनसे अधिक प्रोत्साहन और किसी चीज़से नहीं मिलता। भारतीय गायें पहले इतनी अच्छी थीं कि सिकन्दर यहाँसे हजारों गायें ले गया था। अकबरके कालमें बीस-बीस सेर दूध देनेवाली गायें बेहद थीं, और दूधका भाव दस आने मन था।

हमारी गायें

हमारे देशकी गायोंकी उमर कम होती है। वे दूध भी कम देती हैं। नीचेकी तालिकासे पता चलेगा कि किन-किन देशोंमे गायें एक वर्षमे कितना दूध देती हैं :—

देश	प्रति गाय औसत दूध सेरोंमें
डेन्मार्क	३६५०
स्विजरलैण्ड	३३००
फ्रांस	२११०
अमेरिका	२२४०
जर्मनी	२८००
आयरलैण्ड	२५००
हिन्दुस्तान	३५०

मामला यहीं तक नहीं है। हमारे देशमे बाहरसे दूध और मक्खन आदि पदार्थोंके मँगानेमे लाखों रुपए खर्च होते हैं। सन् १९३८-३९ के आंकड़ोसे पाठकोको कुछ अनुमान होगा कि हमारे देशवासी दूध और दूधजन्य पदार्थोंके लिए विदेशके आसरतू होते जाते हैं :—

नाम	वजन (हडरवेटमे *)	कीमत (रुपएमे)
मक्खन	८२३०	८५७५४४
पनीर	१०३७३	७३७१९१
दूधसे बने खाद्य	९७१६	१३३२१५१
जमाया हुआ दूध	२४५६६	१०१४७८८
जमा दूध—मलाई निकला	२३८७७	४८३६६९
सुखाया हुआ दूध-चूर्ण	४९६३	२७८३२२
स्किम किया हुआ दूध	८६५२	२२८३३७
घी	१७४	९९६४
जोड़	९०५५१	५४४१९६६

* २० हडरवेट=२८ मन।

देशके किसानोंकी खुशहाली और गायकी नस्लकी उन्नतिसे घनिष्ठ सम्बन्ध है।

इसके अतिरिक्त अगर आप आजकल भी देशके प्रत्येक सूबेमें प्रतिव्यक्ति दूधकी खपतके आँकड़ोपर खयाल करें, तो पंजाबमें औसतन प्रतिव्यक्ति दूधकी खपत ज्यादा है। यह हम मानते हैं कि पंजाबी भाइयोंके अच्छे स्वास्थ्यका कारण केवल अधिक दूध पीना ही नहीं है, पर स्वास्थ्य अच्छा रखनेका एक कारण अच्छा और पौष्टिक भोजन जरूर है। पंजाबी किसानोंकी हालत अपेक्षाकृत अच्छी होनेका एक कारण वहाँके गो-वंशकी अच्छी हालत है।

अब हम गायोंकी नस्ल अच्छी करनेके सम्बन्धमें कुछ सुझाव रखते हैं। गो-वंशकी उन्नतिके सम्बन्धमें हमें इन बातोंपर विचार करना है—(१) हमारी आवश्यकताएँ क्या हैं, (२) अपनी आवश्यकता समझकर हम किस प्रकार काम करें, (३) नस्लकी उन्नतिका आधार क्या हो, (४) सरकार क्या कर सकती है और क्या करे, (५) हिन्दुस्तानी अमीरोंका कर्त्तव्य और (६) गो-साहित्यका प्रचार।

(१) हमारी आवश्यकता

और खेतीके लिए अलग प्रकारकी गायोंकी जरूरत समझते हैं, वे इसपर ध्यान दे। हिन्दुस्तान यूरोपकी नकल गायोकी नस्लमे अभी नहीं कर सकता, क्योंकि वहांपर खेतीके लिए बैलोंकी जरूरत नहीं। वहां तो दूध और मासकी खातिर गाये पाली जाती हैं। हमारी समस्या ही दूसरी है, और उसका हल अपनी स्थितिके अनुसार होना चाहिए। इसलिए हमें ऐसी गायोंकी जरूरत हैं, जो दुधार हो और जिसके बछडे अच्छे बैल बन सके।

(२) हमारी कार्य-प्रणाली

हमारी गायोसे हमे प्रत्येक सूबेमे खेती-बारीके लिए बल तो मिल जाते हैं, पर गाय अधिक दूध नही देती, इसलिए हमे देशी गायोंकी नस्ल इस प्रकार उन्नत करनी चाहिए, जिससे गायका दूध बढे और उसके बछड़े अच्छे हों।

इस सिलसिलेमे यह लिखना जरूरी है कि लोगोंको अपने इलाकेमे किस प्रकारकी गाय चाहिए, इस मामलेमे सोच-विचारकर काम करना चाहिए। उदाहरणके लिए इस पुस्तकको पढकर गढवालमे हरियानेकी गायकी नस्लको रखना और उसकी उन्नतिके बारेमे वहां कुछ करना विशेष समझदारीकी बात न होगी। इस बातको नहीं भूलना चाहिए कि हमारा देश ग़रीब है और कभी-कभी एक बैलके मर जानेसे काश्तकार बर्बाद हो जाता है। गढवाल या कुँमाऊँ, खेरी या गोरखपुरमे कँकरेज गायकी उन्नति वर्तमान स्थितिमे किसानो द्वारा सम्भव नहीं। शौकिया किसी भी चीजको कोई रख सकता है, पर गायकी नस्लकी उन्नतिका आधार आर्थिक लाभ होना चाहिए। गाये लोग अधिक इसलिए नहीं रखते कि उनके रखनेसे उन्हें कोई लाभ नहीं।

हमारा कर्त्तव्य यह होना चाहिए कि गायोंको हम किसानोंके लिए आमदनी और मुनाफेकी चीजें बनायें।

(३) नस्लकी उन्नति

अब प्रश्न यह है कि नस्लकी उन्नति कैसे की जाय? क्या विदेशी दुधार गायों या सांड़ोंसे हिन्दुस्तानी नस्ल ठीक की जाय, या फिर देशी बढ़िया सांड़ोंके संयोगसे देशी नस्लोंकी उन्नति की जाय? पहला तरीका जल्दीका है, और इससे दोगली नस्ल तैयार की जा सकती है। दोगली नस्लमें एक बड़ा दोष यह होगा कि देशी नस्लोंके मुकाबिलेमें दोगली नस्ल बीमारियोंका शिकार अधिक होगी। सरकारकी ओरसे इस ओर काम होना चाहिए। पर देहातके लिए हम दूसरा तरीका ही ठीक समझते हैं। यह ठीक है कि नस्लकी उन्नति करनेमें चुनाव करना पड़ेगा और नस्लकी लगभग ६ पीढ़ियोंमें हमें सन्तोषजनक फल मिलेगा। इतनी देरीमें हर्ज ही क्या है? हालैण्डकी होल्सियन फ्रीसियन नस्लकी वर्तमान उन्नत नस्ल तैयार करनेमें १७० वर्ष लगे थे। अगर हमें ४० या ५० वर्ष इस कामकी सफलतामें लग जाय, तो कोई हर्ज नहीं। ठीक रचनात्मक कार्यकी उन्नति बरगदके पेड़की बढ़वारके समान होनी चाहिए। जापान, ब्रेजिल और अफ्रीकामें गायोंकी नस्ल अच्छी की गई है, और हमारे यहां भी वही काम हो सकता है। हमारे अनुमानसे २५ वर्षोंमें नस्ल ठीक हो सकती है। प्रत्येक सूबेको भिन्न-भिन्न क्षेत्रोंमें बांट लेना चाहिए और स्थानीय गायोंकी नस्लको अच्छी करनेका प्रयत्न होना चाहिए।

(४) सरकारका कर्त्तव्य

गायोकी नस्लकी उन्नतिके लिए सरकार कुछ कर रही है , पर वह सन्तोष-जनक नहीं । प्रत्येक सूबेका इस प्रकार विभाजन करना चाहिए कि लोगोको मालूम हो जाय कि सूबेके किस जिलेमे कौन-सी नस्ल ठीक होगी । इस प्रकारके विभाजनके नकशे हजारोंकी सख्यामे सूबेकी भाषाओमे छपाकर प्रत्येक गाँवमे बॅटने चाहिएँ ।

यों तो इम्पीरियल कौंसिल आफ एग्रीकलचरल रिसर्च कार्य कर रहा है , पर अखिल भारतवर्षीय गोवश-सुधार-अफसरकी नियुक्ति होनी चाहिए, जो सब सूबोके पशु-सुधार-सम्बन्धी कामको देखे । प्रत्येक सूबेकी पशु-सुधार और पशु-उन्नति समितियोकी देख-भाल, चारेकी कमी दूर करनेकी तरकीबो, सूबोमे मेलोकी योजना और अन्तर-प्रान्तीय समितियोका सम्बन्ध कायम करना उसका काम हो । रद्दी सांड़ोको बधिया करनेका काम भी जोरोसे हो ।

प्रत्येक सूबेमे पशु-सुधार-सम्बन्धी समिति होनी चाहिए, और केन्द्रीय समितिमे ग़ैर-सरकारी लोगोका---उन लोगोंका जो, इस विषयमे दिलचस्पी रखते हैं--सहयोग होना चाहिए । इस प्रकारका सुधार-अफसर जनता और सरकारी कर्मचारियो और सरकारी कार्यके बीच सयोजकका काम करे ।

हर जिलेमे पशु-सुधार-समितियाँ हो और जमींदारोंसे आग्रह किया जाय कि वे गोचरभूमि छोडें । सूबोमे देहात-सुधार-कानून पास हो या पचायत कानून, जो हर गाँवमे गोचरभूमि-कानून बना सके ।

(५) अमीरोंका कर्त्तव्य

हिन्दुस्तानी अमीरोंको बढिया गाये पालनी चाहिए और उनकी देखभालमे उन्हे समय देना चाहिए। अच्छा तो यह रहे कि वे लोग गायकी सेवा भी खुद करें और कमसे कम एक घंटा तो गायोंकी देखभालमे दें ही।

(६) गो-साहित्यका प्रचार

केन्द्रीय समिति द्वारा अथवा गोवंश-सुधार-अफसरकी देखरेखमे एक मासिक पत्र हिन्दीमे निकले, जिसके भारतीय भाषाओंके संस्करण भी निकलें। साथ ही साथ सालमे एक बार भारतीय भाषाओंके समाचारपत्रोंके सम्पादकोंसे गोवंश-सुधार-अफसर मिलकर इस ओर लोगोंका ध्यान आकर्षित करे।

पं० श्रीराम शर्माकी लिखी अन्य पुस्तकें

प्राणोंका सौदा

इसमे प्रसिद्ध तथा कलाविद शिकारियोंपर बीती घटनाओ और दुर्घटनाओका चित्रण किया गया है। लेखककी सूक्ष्म कल्पनाशक्ति, परिष्कृत निरीक्षण वुद्धि तथा अनुभूतिने कहानियोंमे जीवन उँडेल दिया है। कहानी पढते समय ऐसा मालूम होता है, मानो शिकारकी समस्त रोमाचकारी घटनाएँ पाठकके सामने घट रही हो। पुस्तकको पूरी पढे विना आपका जी न मानेगा। शिकारके इतने सजीव, रोमाचकारी और हृदयग्राही वर्णन अन्यत्र पढनेको न मिलेगे। मूल्य ३), सचित्र।

बोलती प्रतिमा

'बोल्ती प्रतिमा' की कहानियाँ क्या है—भौतिक चित्रोंकी दुखभरी, दर्दभरी, जुल्म-सितमसे झुलसी, करुणामे डूबी और सहानुभूतिकी शीतल चादरमे लिपटी सजीव झाँकियाँ है। 'बोलती प्रतिमा' शीर्षक सग्रहकी पहली कहानी कलाके उत्कृष्ट विकासकी पूरी परिचायिका है। सग्रहकी अधिकाश कहानियोंमे किसानोके जीवनके घात-प्रतिघात तथा मानसिक द्वन्द्वके करुण चित्र हैं, जिन्हे देखते ही दिल दर्दसे तड़प उठता है और पीडित मानवताके प्रति स्वभावत मनमे सहानुभूतिकी भावना उमड़ने लगती है। मूल्य सजिल्द पुस्तकका १॥।)।

शिकार

'शिकार' हिन्दी-साहित्यमे अपने ढगकी निराली पुस्तक है। हिन्दीमे शिकार-सम्बन्धी सर्वथा नवीन साहित्य निर्माण करनेका एकान्त श्रेय प्रस्तुत पुस्तकके लेखकको ही है। यह पुस्तक लेखककी मूल पुस्तक 'शिकार' का सक्षिप्त सस्करण है, जिसमे सात कहानियाँ सगृहीत हे। सभी कहानियोंमे प्राकृतिक दृश्योका सजीव वर्णन, अदभुत वीरताका रोमाचकारी वृत्तान्त तथा मनोभावोका सूक्ष्म विश्लेषण है। ग़रीव और किसानोके चरित्र-चित्रणको पढकर आप मन्त्रमुग्ध-से हो जायँगे। मूल्य सक्षिप्त सस्करण ॥≈), बडेका २॥) ।

झाँसीकी रानी

झाँसीकी मरदानी रानी स्वनामधन्या श्रीमती लक्ष्मीवाईके नामसे कौन परिचित नहीं है? प० श्रीराम शर्माने उन्हीं वीर-विदुषी रानी लक्ष्मीवाईकी जीवनी लिखकर अपनी जादू-भरी कलमका कमाल दिखाया है। ऐसी ओजस्विनी भाषामे इस प्रकार वीर भावोंसे भरी हुई लक्ष्मीवाईकी जीवनी और कोई प्रकाशित नहीं हुई। पढते ही शरीरमे वीरताकी विजली कडक जायगी और उत्साहसे हृदय वल्लियों उछलने लगेगा। मूल्य ॥) ।

पपीता

पं० हरिशंकर शर्माकी लिखी पुस्तकें

चिड़ियाघर

भूमिका-लेखक—श्री प० पद्मसिह शर्मा

हास्यरसकी श्रेष्ठ पुस्तक 'चिड़ियाघर' के होते हुए कोई भी सुरुचि-सम्पन्न हास्य-प्रेमी यह नहीं कह सकता कि हिन्दीमे शुद्ध, परिष्कृत और सुरुचि-वर्द्धक हास्यका अभाव है। बड़ेसे बड़े साहित्य महारथियोंने इस बातको एक स्वरसे स्वीकार कर लिया है। जिसने इस पुस्तकको हाथमे लिया, उसके पेटमे हँसते-हँसते बल पड़ गये और वह ससारकी समस्त चिन्ताओंको भूल गया। मूल्य १)।

वीरांगनाएँ

ओजस्विनी भापा! अलौकिक भाव!! विलक्षण घटनाचक्र!!! 'वीरागनाएँ' नामक पुस्तकमे पढिये। यदि आप अतीत आर्य-गौरवका खून खौलनेवाला अमर इतिहास, अन्याय और अत्याचारोसे जूझनेवाली राजपूत वीरागनाओंके अनुपम साहस, अद्भुत आत्म-त्याग, कठोर तपस्या और प्राणोसे भी प्यारी सतीत्व-रक्षाकी रोमाचकारी कथाएँ, स्वाभिमान, स्वदेश-प्रेम और आत्म-गौरवकी अमर गाथाएँ पढना चाहते है, तो 'वीरागनाएँ' अवश्य पढिये। मूल्य १)।

पिंजरापोल

चिड़ियाघरकी भाँति ही 'पिजरापोल' मे भी ससारके अनेक विचित्र जीव-जन्तु एकत्र किये गए हैं। पुस्तक पढते-पढते आप मारे हँसीके लोट-पोट हो जायँगे, और जब तक उसे आद्यन्त पढ न लेंगे, खाना-पीना तक भूल जायँगे। इतना सुन्दर और शिष्ट हास्य अन्यत्र मुश्किलसे मिलेगा। 'पिंजरापोल' से मनोविनोद तो होता ही है, साथ ही अनेक प्रकारकी चेतावनी और शिक्षाएँ भी प्राप्त होती हैं। लेखकके चुभते हुए व्यग्य और चुटीली चुटकियाँ पढकर सहृदय पाठकके मुँहसे अनायास ही 'वाह' और 'आह' निकल पड़ती है। मूल्य १)।